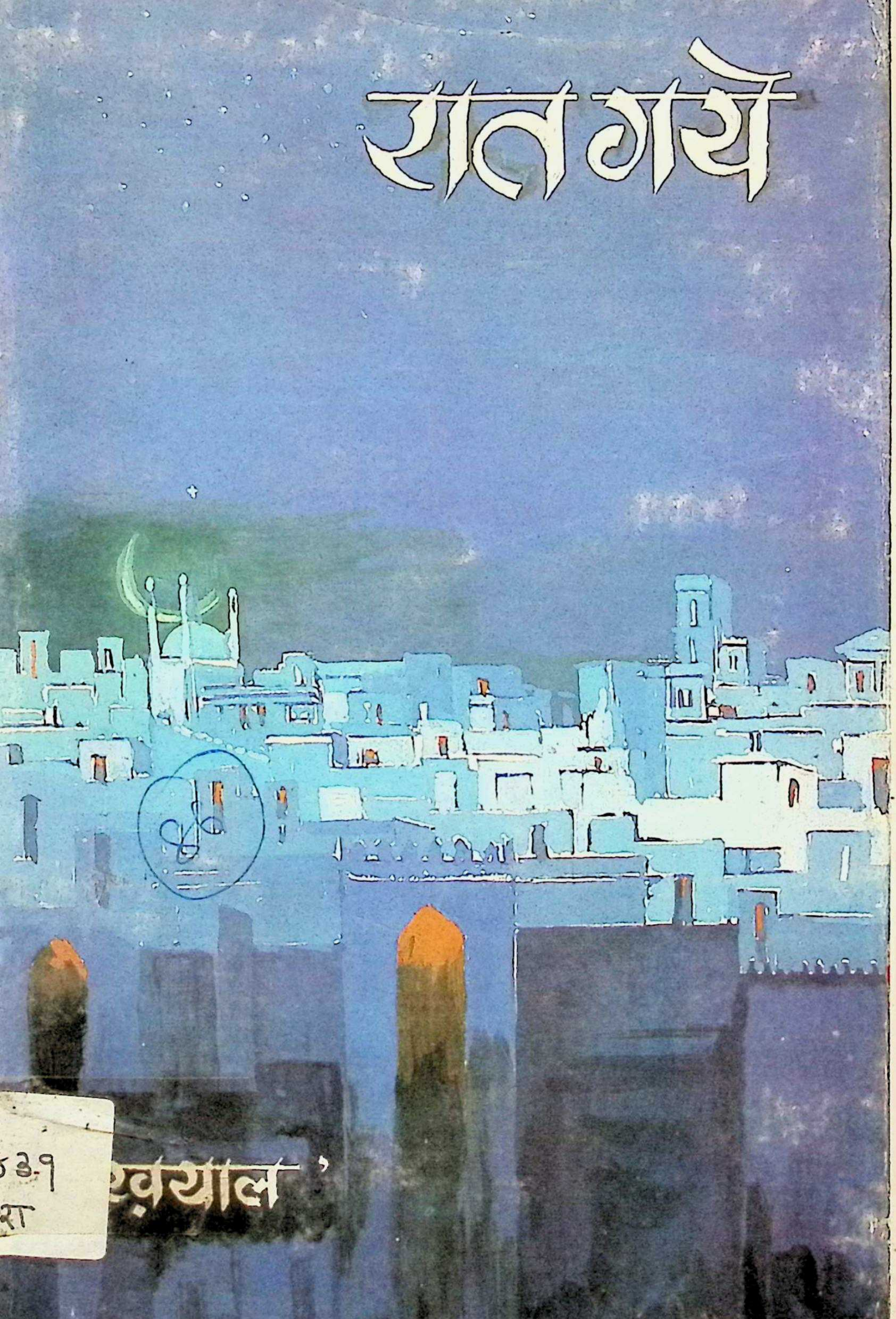

रात गये
ख़याल



प्रियदर्शी ठाकुर 'ख़याल'

जन्मः 22 अगस्त 1946.

मूल निवासीः सिंहवाड़ा, दरभंगा (बिहार)।

अब करीब सत्रह बरसों से राजस्थान में रह रहे है।

शिक्षाः एम०ए० इतिहास। दिल्ली विश्वविद्यालय से 1967 में।

1967 से 1970 तक भगतसिंह कालेज, दिल्ली में पढ़ाया। 1970 से आई०ए०एस० के राजस्थान कैडर में। आजकल अजमेर डिवीज़न के डिवीज़नल कमिश्नर हैं।

हिन्दी कविताएं अपने नाम से लिखते हैं और उर्दू कलाम के लिए 'ख़याल' तख़ल्लुस फ़रमाते हैं। अपनी ज़्यादातर ग़ज़लों को ये इन्सानी रिश्तों की अलग-अलग और लगातार बदलती हुई शक्लों को पहचानने और समझने की कोशिश मानते हैं।

"रात गये" इनकी ग़ज़लों का पहला संकलन है।

पूर्व में प्रकाशित कृतिः

"टूटा हुआ पुल"--कविता संग्रह

रात गये

रात गये

प्रियदर्शी ठाकुर 'ख़याल'

पंचशील प्रकाशन
जयपुर-302003

प्रियदर्शी ठाकुर

रेखा ठाकुर

ISBN 81-7056-049-7 ......

संस्करण : प्रथम, 1989

प्रकाशक:

पंचशील प्रकाशन

फिल्म कॉलोनी, चौड़ा रास्ता,

जयपुर-302003.

मुद्रक : शांति मुद्रणालय, दिल्ली-32.

RAAT GAYE

By Priyadarshi Thakur 'Khayal'.

(Ghazals.)

Rs. : 65.00

माँ, रेखा, जया
और
भुवन के लिए

विषय-सूची

मुक़द्दमा

मख़मूर सईदी

जनाब प्रियदर्शी ठाकुर 'ख़याल' से मेरा तआरुफ़ लगभग 13 साल पुराना है। वह उन दिनों टोंक में जिला कलक्टर के मन्सब पर फ़ाइज़ थे। मैं किसी निजी ज़रूरत से या शायद किसी मुशायरे में शिरकत के लिए वहां गया। उस्ताद मरहूम बिस्मिल साहिब भी उन दिनों टोंक ही में मुक़ीम[1] थे। उन्होंने 'ख़याल' साहिब की बहुत तारीफ़ की, बहैसियत शाइर भी और बतौर इन्सान भी। मैंने उस वक़्त तक न 'ख़याल' साहिब का कलाम सुना था न उन्हें क़रीब से देखा था। दिल में यह सोचता हुआ कि बिस्मिल साहिब ने उनकी जो तारीफ़ें की हैं उनमें ग़ालिबन 'ख़याल' साहिब के साथ उनके तआल्लुक़े ख़ातिर[2] को ज़्यादा दख़्ल होगा, मैं बिस्मिल साहिब के साथ ही उनकी ख़िदमत में पहुंचा और उनकी कुछ नज़्में सुनने की सआदत[3] भी हासिल हुई। मैंने महसूस किया कि बिस्मिल साहिब ने उनके और उनकी शाइरी के बारे में जो कुछ कहा था वह मुबाल्ग़े[4] पर नहीं सच्चाई पर मब्नी[5] था।

शाइरी, शाइर की शख़्सियत का पर्दा भी हो सकती है और उसे बेपर्दा करने वाली भी, लेकिन मुझे वही शाइरी मुतास्सिर[6] करती है जो शाइर की शख़्सियत का इज़्हार[7] हो। मेरे नज़दीक शेर, शाइर की ज़हनी और जज़्बाती स्वानेह-उम्री[8] है। ख़ारिज[4] की ज़िन्दगी में वह अपने इर्द-गिर्द जो कुछ देख रहा है और उसके उन मुशाहिदात[10] के जो तआस्सुराती नक़्श[11] उसके बातिन[7] में मरतसिम[13] हो रहे हैं, उन्हें लफ़्ज़ों की गिरिफ़्त में ले लेना ही शाइर का अस्ल फ़न और उसकी फ़नकारी की सही पहचान है। उसके यह तआस्सुरात जितने नाज़ुक और लतीफ़[14] होंगे, उन्हें मारिजे-इज़्हार[15] में लाने के लिए उतने ही नाज़ुक और लतीफ़ अल्फ़ाज़ का इन्तेख़ाब शाइर का

---

1. प्रवासी 2. पारस्परिक स्नेह 3. सौभाग्य 4. अतिशयोक्ति 5. आधारित
6. प्रभावित 7. अभिव्यक्ति 8. जीवनी 9. बाह्य 10. अवलोकन से प्राप्त अनुभव
11. प्रभावपूर्ण चिन्ह 12. अन्तर्मन 13. सुसज्जित 9. कोमल 15. वर्णन

फ़रीज़ा[1] है और इस फ़रीज़े की अदायगी में ख़ुद उसका फ़न्नी शऊर[2] और उसकी दाख़िली कैफ़ियात[3] उसकी रहनुमा बन जाती हैं।

'ख़याल' साहिब की शख़्सियत में एक गुदाज़[4] है अन्दर ही अन्दर जज़्बे और अहसास[5] की तमाज़त[6] से पिघलते रहने की एक कैफ़ियत[7], मज़ाहिरे फ़ितरत[8] में सूरज, चांद, सितारे और पेड़ उन्हें बतौरे ख़ास[9] अपनी तरफ़ मुतव्वजह[10] करते हैं। उनमें ग़ालिबन वह अपने बातिन का अक्स[11] देखते हैं। इसे यूं भी कहा जा सकता है कि यह मज़ाहिरे फ़ितरत उनकी शख़्सियत के आईने में इस तरह मुनअकिस[12] हुए हैं कि ख़ुद उनके वुजूद[13] का हिस्सा बन गये हैं। उनके अशआर[14] में तुलू[15] होते हुए आफ़ताब[16] की शुआओं[17] की सी जो ख़ुशगवार तमाज़त[18] है, आधी रात के चांद की किरनों जैसी जो शबनमी ठंडक है, अंधेरे आसमान में जगमग जगमग करते सितारों की रोशनी की तरह नूर पाशी का जो इन्सानी जज़्बा है और घने पेड़ों की तरह जलते रास्तों पर साए बिछा देने की जो मासूमाना ख़्वाहिश बार-बार सामने आती है, वह सब उनकी इसी शाइराना शख़्सियत की मुख़्तलिफ़ जिहात[20] हैं जिनकी उन्होंने बड़ी सच्चाई और ख़ुलूस के साथ अपने जिस्मो-जाँ में परवरिश की है।

एक शख़्सियत का दूसरी शख़्सियत से तआरुफ़[21] हो या तसादुम[22] दोनों सूरतें कुछ रिश्तों को जन्म देने का सबब बन जाती हैं। यह रिश्ते पाएदार[23] भी हो सकते हैं और नापाएदार भी लेकिन एक हस्सास[24] इन्सान का इनसे मुतास्सिर होना लाज़मी है। वह इन रिश्तों की माहियत[25] जानना चाहेगा, यह समझना चाहेगा कि उसकी निजी ज़िन्दगी में भी और समाजी ज़िन्दगी में भी इनकी क्या जगह है? यह उसकी ज़ात[26] से हम-आहंग[27] हैं या मुतासादिम[28] ? अगर हम-आहंग हैं तो क्यों और

1. कर्तव्य 2. क्लातमक विवेक 3. आन्तरिक भावनायें 4. कोमलता, विनम्रता 5. अनुभूति 6. गरमी 7. स्थिति 8. ब्रह्माण्ड 9. विशेषतः 10. आकर्षित 11. प्रतिबिंब 12. प्रतिबिम्ब 13. अस्तित्व 14. शेर (बहु) 15. उदय 16. सूर्य 17. किरणों 18. गरमी 19. प्रकाश बिखेरना 20. विभिन्न पहलू 21. परिचय 22. टकराव 23. मजबूत 24. भावुक 25. असली स्वरूप 26. निजी अस्तित्व 27. अनुकूल 28. अन्तर्विरोधी

मुतासादिम हैं तो क्यों? यही वह काविशें[1] और ख़लिशें[2] हैं जो एक हस्सास आदमी को अक्सर सूरतों में शाइर बना दिया करती हैं। 'ख़याल' साहिब ने जहां फ़ितरत के साथ अपने तआल्लुक़ को समझने की कोशिश की है, वहीं इन्सानी रिश्तों को भी उन्होंने अपनी नज़र और अपनी फ़िक्र का महवर[3] बनाए रखा है। फ़ितरत के साथ उनके गहरे तआल्लुक़े ख़ातिर ने उनके कलाम में कुछ मावराई कैफ़ियतों[4] को जन्म दिया है तो इन्सानी रिश्तों से अमीक़[5] दिल्चस्पी ने उनके फ़िक्रो-तख़य्युल[6] की उड़ानों को ज़मीन के साथ एक अटूट बन्धन में बांधे रखा है। मुझे अपना एक शेर याद आता है :

बलन्दियों के सफ़र में ज़मीं से दूर न जा
ज़मीं न ज़ेरे-क़दम[7] हो तो आसमां क्या है?

'ख़याल' साहिब के फ़िक्रो तख़य्युल की उड़ानें बिला शुब्ह[8] आसमाँ पैमाँ[9] हैं मगर उनके क़दम ज़मीन पर मज़बूती से जमे हुए हैं। यही वजह है कि उनकी शायरी में हमें इर्द-गिर्द फैली हुई, सोती जागती ज़िन्दगी की मुताहर्रिक[10] तस्वीरें नज़र आती हैं और हमारे ज़हनो-दिल में एक मुस्तक़िल[11] जगह बना लेती हैं। जो शाइर ऐसा कहने पर क़ादिर[12] हो, उसे कौन सर-आँखों पर जगह न देगा :

दुख हुआ होगा तुम्हें भी तो इसे देख के अब
मेरी आंखों में जो यह चुप सी समझदारी है

मेरी उलझन से, मेरे साथ उलझने वाला
कोई तो होता मेरी बात समझने वाला

वो ख़फ़ा है तो रहे, इतना बतादे मुझको
मेरे आने की ख़बर पा के संवरता क्यूँ है

एक साया भी दरख़्तों का न राहों में बचा
के जो थक जाये मुसाफ़िर तो ठहर जाये कहीं

1. प्रयत्न 2. उलझन 3. धुरी 4. आध्यात्मिक भावनाएं 5. गहरा 6. सोच 7. पांव के नीचे 8. निःसन्देह 9. गगनचुम्बी 10. जीवन्त 11. स्थाई 12. योग्यता रखता हो

हर-दिल-अज़ीज़ शख़्स की क़िस्मत तो देखिए
ऐसा हुआ वो सबका, किसी का न हो सका

ऐसे-ऐसे कितने ही शेर हैं जो आप अगले सफ़हात[1] में पढ़ेंगें, मैं यहां क्यों नक़्ल करूं ?

'ख़याल' साहिब इबतिदा[2] में हिन्दी में लिखते थे—आज़ाद नज़्में। ग़ज़ल की तरफ़ और उर्दू की तरफ़ भी वह बाद में मुतवज्जह हुए, मेरे नज़दीक यह हम-अस्र[3] उर्दू शाइरी के लिए एक नेक शगून था कि उन जैसा ताज़ाकार शाइर इधर आया। मैं उनकी ग़ज़लों के इस अव्वलीन[4] मजमूए का जो बयकवक़्त[5] देवनागरी और उर्दू रस्मुल ख़त[6] में शाए[7] हो रहा है, पुर तपाक[8] ख़ैर मक़दम[9] करता हूं और उम्मीद करता हूं कि इसे कुबूले-आम[10] हासिल होगा।

दिल्ली,

19 नवम्बर, 1988 मख़मूर सईदी

1. पृष्ठों 2. आरंभ 3. समकालीन 4. पहला, प्रथम 5. एक ही साथ 6. लिपि 7. प्रकाशित 8. हार्दिक 9. स्वागत 10. लोकप्रियता

पसमंज़र[1]

ज़िक्रे टौंक[2]/यादे-बिस्मिल[3]/आग़ाज़े-ग़ज़ल[4]

सन् '65 के आस-पास से मैं हिन्दी में कविताएँ और आज़ाद नज़्में लिखता रहा था, लेकिन सन्' '70 के बाद यह सिलसिला कई मसरूफियात[5] की वजह से मद्धम पड़ गया, बल्कि यूँ कहें, कि बन्द जैसा ही हो गया। 1975 में कुछ दोस्तों के इसरार पर कुछ कविताएं रिसालों[6] में भेजीं, और पहली बार भेजी गयी कविताओं में से एक कविता ''ओ पाँच वृक्षों'' भाई धर्मवीर भारती ने ''धर्मयुग'' में शाये की। अगले एक बरस में ''धर्मयुग'', ''रविवार'' और राजस्थान साहित्य अकादमी के रिसाले ''मधुमती'' में मेरी कई और कविताएँ छपीं। जिन लोगों ने पढ़ीं उनमें से कुछ ने ख़त लिखे, कई ने चर्चा की। दोस्तों और शुभचिन्तकों ने हौसला आफ़ज़ाई की और आगे लिखते रहने की सलाह दी, तो लिखने का सिलसिला फिर से शुरू हो गया। पहली बार मुझे यह एहसास हुआ कि मेरे कलाम के पसमंज़र और मज़ामीन[7] चाहे कितने ही ज़ाती[8] क़िस्म के क्यूँ न हों, उसमें से काफ़ी कुछ ऐसा भी हो सकता है जो औरों को भी अच्छा और पढ़ने लायक लगे। और अगर ऐसा है तो वह मंज़रे-आम[9] पर लाये जाने का मुस्तहक़[10] है।

इन्हीं दिनों, सितम्बर'' '75 में मेरी पोस्टिंग बतौर ज़िला कलेक्टर टौंक में हो गयी।

मुझे लगता है कि टौंक की सरज़मीन और आबो-हवा में शायरी की फ़ज़ा[11] एक पुरअसरार[12] तरीक़े से रची-बसी हुई है। गालिबन[13] यही

1. परिदृश्य 2. टौंक का ज़िक्र 3. बिस्मिल की याद 4. ग़ज़ल की शुरूआत 5. व्यस्तताओं 6. पत्रिकाओं 7. विषय वस्तु 8. व्यक्तिगत 9. लोगों के समक्ष 10. हकदार 11. वातावरण 12. रहस्यमय. 13 शायद

वजह है कि इस एक छोटे से शह्र ने अख़्तर शीरानी और बिस्मिल सईदी जैसे नामी-गिरामी शाइर पैदा किये। उर्दू शायरी की ''ट्रेडीशन्स'' यहाँ इतनी ज़बरदस्त हैं कि कहते हैं टौंक में हर तीन शख़्सों में से एक शाइर होता है। और मैं समझता हूँ कि बाक़ी बचे हुए दो भी ऐसे डूब कर सुनने और समझने वाले, दाद देने वाले सामयीन[1] होते हैं जिनके बग़ैर भी शायरी परवान नहीं चढ़ती। बनास नदी की वादी में बसे इस शह्र के लोगों की ज़बान उतनी ही शीरीं[2] है जितने बनास की रेत पर उगाये जाने वाले यहाँ के खरबूज़े।

पहले-पहल मैं न जान पाया कि यहाँ का माहौल मेरी कलम को एक नया मोड़, एक नयी ज़बान दे देगा और मैं अपनी आज़ाद नज़्मों की आज़ादी छोड़ कर अपनी रज़ा[3] से ग़ज़ल की सुरीली बह्रों[4] में असीर[5] हो जाऊंगा। दरअस्ल इस निस्बत[6] के पहले कुछ महीनों में मैं पहले की तरह हिन्दी कविताएँ ही लिखता रहा। लेकिन दूसरी तरफ एक नयी शुरूआत भी हो रही थी। कॉलेज के ज़माने से ही मीर, ग़ालिब, मोमिन, ज़ौक, ज़फ़र, जोश, साहिर, मजाज़ वगैरह के कलामों के देवनागरी संस्करण (भला हो मरहूम प्रकाश पण्डित जी का) पढ़ता रहा था और उर्दू ज़बान की मिठास और ग़ज़ल के रंगो-आहंग[7] और रूमानियत से मुतास्सिर भी था। अब पहली बार एक ऐसे शह्र में था जहाँ उर्दू के कई बेहतरीन और उस्ताद शाइरों से उनका कलाम उन्हीं की ज़बानी सुन सकता था। टौंक में शेरी नशिस्तें[8] आये दिन होती रहती थीं, और अपनी दिलचस्पियों की वजह मैं उनमें अक्सर शरीक हुआ किया।

इसी बीच साहिबजादा शौकत अली खाँ (जो अब टौंक के अरबी-फ़ारसी रिसर्च इदारे[9] के डाइरेक्टर हैं) और डा. सईद की मारफ़त मेरा तआरुफ[10] उर्दू के मशहूर शाइर मरहूम बिस्मिल सईदी साहब से हुआ।

1. सुननेवाले 2. मीठी 3. स्वीकृति 4. छन्दों 5. बन्दी 6. संबंघ 7. रंग और संगीत 8. कवि गोष्ठी 9. संस्थान 10. परिचय.

बिस्मिल साहिब से तो जैसे पिछले किसी जन्म का नाता रहा हो—कुछ ही दिनों में ऐसी उन्सियत[1] हो गयी जैसे बरसों के वाक़िफ हों। न उम्रों के फ़र्क़ से कोई फ़र्क़, न किसी और क़िस्म की कोई झिझक। अक्सर शाम को शौकत मियाँ के साथ मेरे घर आ जाते। आते ही अपना एक मतला पढ़ के ख़ुद को और मुझे एक साथ मख़्सूस कर देते। कहते, कलक्टर साहिब

''हर बज़्म के अफ़साने नहीं हैं हम लोग
हर शम्अ के परवाने नहीं हैं हम लोग''

फिर हँस पड़ते। घंटों हम उनकी मोहब्बत-भरी शख़्सियत के नूर और बातों के रस में डूबे बैठे रहते। दुनिया भर की बातें होतीं। बिस्मिल साहिब कभी नवाब साहब के ज़माने में पढ़े गये किसी मुशायरे का ज़िक्र करते तो कभी जोश और कँवर साहब के साथ गुज़ारी गयी किसी शाम का, कभी उसी दिन के कहे टटके* अशआर पढ़ते तो कभी कोई बहुत पुरानी चीज़। और हर मुलाक़ात में मुझसे एक-न-एक कोई कविता सुनने की ज़िद करते।

बिस्मिल साहिब जैसा हस्सास[2] और वसी-नज़र[3] इन्सान और अदीब[4] मैंने नहीं देखा अब तक! कविता और शायरी की ''यूनिवर्सल अपील'' के हामी थे वो। जैसा अक्सर उर्दूदानों और ग़ज़ल के शाइरों के साथ होता है, वे हिन्दी कविता की इब्तिदा[5] से पहले ही अपना ज़ह्न[6] बन्द न होने देते। बल्कि कोई अल्फ़ाज़[7] अगर ऐसे भी होते कि जो उनके लिए नये होते, तो रोक कर उनका मफ़हूम[8] पूछते, फिर मुकर्रर-इरशाद[9] कह कर आँखें-मूँद, उन सतरों को बड़े ध्यान से दुबारा सुनते। अपनी शायरी में बह्र और मौज़ूनियत[10] की पाबन्दी के बावजूद हिन्दी की बे-बह्र और नस्रनुमा[11] कवितायें बड़े ज़ौक से सुनते, और जब किसी बंद या ख़याल से

---

1. स्नेह 2. संवेदनशील 3. उदार दृष्टिकोण वाला 4. साहित्यकार 5. प्रारम्भ 6. दिमाग 7. शब्द (बहु.) 8. अर्थ 9. फिर पढ़ें 10. छन्द और वज़न 11. गद्य जैसा.
* ताज़ा-ब-ताज़ा

मुतास्सिर[1]होते तो अचानक उनकी आँखें भर आतीं और गला रुंध जाता। फिर भी दाद की मिक़दार और जोशो-ख़रोश में कमी न आती। एकदम ज़ोर से आह हा हा हा-आ कर उठते। जिस मोहब्बत और ख़ुलूस[2] से वो हिन्दी की कवितायें सुनते थे वह ''सेक्यूलरिज़्म'' के बारे में हज़ार तक़रीरों[3] पर भारी होती। शीशे की तरह साफ झलकता था कि बिस्मिल अपने ख़ुदा का, वो नेक बन्दा है जिसे किसी और बन्दे के भगवान की हक़ीक़त से कोई गुरेज़[4] नहीं। किसी मज़हबी तसादुम[5], किसी फिरकापरस्ती का कोई हिस्सा वो हो ही नहीं सकता। अब भी कभी बिस्मिल साहिब की इन्सानी मोहब्बत की वुसअत[6] के बारे में सोचता हूँ तो दिल अक़ीदत[7] से भर उठता है।

इतने बड़े शाइर होने पर भी ग़ुरूर तो बिस्मिल साहिब को जैसे छू तक न गया था। उम्र में क़रीब दुगुने और फ़न में ज़मीन-आसमान का फ़र्क़ होते हुए भी मुझे वो गोया अपना दोस्त समझने लग गये थे। एक दिन कहने लगे, आपकी कविताएँ सुनकर लगता है कि अगर आप शेर कहें तो बड़ी आसानी से बहुत जल्द ही बहुत अच्छे शेर कहने लगेंगे। यह इसरार[8] का उनका अपना तरीक़ा था। मैं तो जैसे तैयार ही बैठा था। कुछ ही दिनों बाद मैं ने ''रात गये'' ग़ज़ल कही। बिस्मिल साहिब ने सुनी तो इतने ख़ुश हुए कि एकदम गले से लगा लिया। कहा, कुछ भी हो, शेर कहना न छोड़ियेगा।

इस तरह शुरू हुआ अशआर और ग़ज़लों का यह सिलसिला, लेकिन बहुत देर तक जारी न रह सका। कुछ ही महीनों बाद मेरा तबादला जयपुर हो गया। अभी तक याद है मुझे टौंक नगर परिषद में मेरा फ़ेयरवेल था। बिस्मिल साहिब से लोगों ने कहा कि वे भी कुछ बोलें। उन्होंने सिर्फ दो शेर पढ़े

1. प्रभावित 2. निष्ठा 3. भाषणों 4. आपत्ति 5. संघर्ष 6. विशालता 7. श्रद्धा 8. आग्रह

"जुदा हो कर वो मुझसे जा रहा है
मोहब्बत का ज़माना आ रहा है
ख़्याले-हिज्र[1] दिल पर छा रहा है
वो बैठा है मगर याद आ रहा है"

और बेसाख़्ता रो पड़े। इस दरजा, कि फंक्शन ख़त्म होने के पहले ही शौकत मियाँ को उन्हें सहारा दे कर ले जाना पड़ा। उसके बाद बिस्मिल साहिब से मुलाकात न हो सकी। कोई महीने भर बाद ही वो भी टौंक छोड़ कर वापस दिल्ली चले गये। करीब सात-आठ महीने बाद वहीं उनका इन्तक़ाल हो गया।

ग़ज़लों की अपनी इस पहली किताब का उन्वान[2] इसीलिए मैं ने उस ग़ज़ल से लिया है जो मैं ने बिस्मिल साहिब के कहने पर लिखी थी और जो उन्हें बहुत पसन्द थी, क्योंकि उन्होंने ही मुझे ज़ौक़े-तगज़्ज़ुल[3] का इनआम दिया था। आज इस मौक़े पर मैं अपना पहला सलाम उन्हीं की क़ाबिले-ताज़ीम[4] शख़्सियत को पेश करता हूँ।

टौंक में कोई सवा बरस रहा। इस अरसे में टौंक और टौंक के बाहर दोनों के कई-एक उर्दूदाँ और शायरों का नियाज़[5] हासिल हुआ। इनमें से कई दोस्त भी बन गये। इनका ज़िक्र भी यहाँ इसलिए ज़रूरी है कि इन लोगों की दाद और हौसला आफ़ज़ाई के बिना[6] पर ही ग़ज़ल में मेरी दिलचस्पियाँ बरक़रार रह पायीं और यह मजमूआ[7] मंज़रे-आम पर आ पाया। मोहतरम खन्दाँ साहिब, भाई बज़्मी साहब, मख़्मूर साहिब, शमशेर ख़ाँ साहिब, राशिद साहिब, आक़िल साहिब, उस्मानी साहिब और शौकत

1. विरह का ख़याल 2. शीर्षक 3. ग़ज़ल की विधा में रुचि 4. आदर योग्य 5. परिचय, साथ 6. आधार 7. संकलन.

अली ख़ाँ साहिब के नाम क़ाबिले-ज़िक्र हैं। वैसे तो इस सिलसिले में टौंक के इतने लोगों का मशकूर हूँ कि सब के नाम गिना सकना भी मुश्किल है। टौंक के बाहर के लोगों में (जिनसे मुलाक़ात की इब्तदा टौंक रहने के दौरान हुई) भाई वसीम बरेलवी साहिब और राही शहाबी साहिब से बेइन्तहा मोहब्बत मिलती रही है। वसीम साहिब ने तो कई महफ़िलों में मेरी मामूली सलाहियतों[1] को भी ग़ैर-मामूली क़रार दे कर न सिर्फ़ ज़र्रानवाज़ी की है बल्कि आगे लिखते रहने की एक मज़ीद[2] वजह भी मुझे दी है (ताकि उनका कहा आयन्दा[3] ही सच होने की गुंजाइश रहे!)

टौंक छोड़ने के बाद मैं कई बरसों तक क़रीब-क़रीब बिल्कुल ख़ामोश हो बैठा। यह ख़ामोशी फिर तोड़ी तो टौंक ने ही तोड़ी। जुलाई 87 में अजमेर डिवीज़न का डिवीज़नल कमिश्नर मुकर्रर होने पर एक बार फिर टौंक आने-जाने का, क़याम करने का सिलसिला जारी हुआ। पुराने तआल्लुक़ात की झाड़-पोंछ हुई, नशिस्तें मुनक्विद[4] हुई और अदबी ज़ौक़[5] में गोया नयी जान पड़ी। अजमेर में भी फ़ज़लुल मतीन साहिब, मरहूम सीरत अजमेरी साहिब, मूनिस साहब, सुरेन्द्र चतुर्वेदी साहिब, अनिल लोढ़ा साहिब जैसे मँजे हुए अदीबों का साथ मिला। लिखने का सिलसिला फिर चल निकला। लेकिन यह सिलसिला भी ग़ालिबन[6] रंग न लाता अगर इसे मेरे घर के लोगों और कुछ ज़ाती दोस्तों की भरपूर दाद और "एडमिरेशन" न मिली होती। मैं बहुत मशकूर[7] हूँ अपने बड़े भाई प्रोफेसर मधुसूदन ठाकुर का, मामा धीरेन्द्र मिश्र का, चेयरमैन साहिब और निर्मला जीजी का, विमला जी का, नुनू जी और लीला का, डा. पी.एन. शर्मा, डा. पी. प्रसाद, डा. आत्माराम गर्ग और डा. पी.एन. माथुर का, इन्दुभूषण अबरोल, अशोक पांडे, मेजर यादव, अशोक जेठानी, प्रेम चन्डक, चन्दर सिंह जी, सुरेन्द्र कुमार, तीती और केदार जी का, और तमाम उन दोस्तों का जिन्होंने मेरा कलाम बार-बार और बाज़ौक़[8] सुना और मेरा

1. योग्यताओं 2. अतिरिक्त 3. भविष्य 4. आयोजित 5. साहित्यिक रुचि 6. संभवत: 7. आभारी 8. रुचि के साथ.

हौसला बनाये रखा। और सबसे ज़ियादा मशकूर हूँ मैं अपनी शरीके-हयात[1] रेखा, बेटी जया और बेटे भुवन का। जब भी मैं कोई नया शेर कहता हूँ तो सबसे पहले रेखा को सुनाता हूँ क्यों कि वो न सिर्फ मेरी 'एडमायरर'' हैं बल्कि मेरी ''क्रिटिक'' भी। और शेर समझने की उनकी सलाहियतें ऐसी है कि सुनते ही बता देती हैं कि आया शेर दौड़ेगा या फ़क़त[2] चलेगा, याकि शेर लंगड़ा है! बच्चों का शुक्रिया यूँ कि कलाम बड़ों की संजीदगी[3] से सुन लेते हैं और कोई सवाल नहीं करते।

इस मजमूए का मुसव्विदा[4] तैयार करने और इसे तरतीब[5] देने में भाई राशिद टौंकी, भाई आबिद आक़िल, जनाब क़मर साहिब, पारीक साहिब, मेरे प्रकाशक श्री एम.सी. गुप्ता और अनिल कुमार ने मेरी बेइन्तहा मदद की है। यहाँ उनका ख़ास ज़िक्र और शुक्रिया न करूँ तो यह एक नाइन्साफ़ी होगी। तहे-दिल से शुक्रिया भाई राम जैसवाल का भी करना है जिन्होंने इतना ख़ूबसूरत जैकेट डिज़ाइन दे कर इस किताब को चार-चांद लगाये हैं।

अपनी इन ग़ज़लों के बारे में मुझे सिर्फ दो बातें कहनी हैं। पहली तो यह कि ये पहले से तयशुदा[6] किसी मक़सद[7] को ज़ह्न में रख कर नहीं लिखी गयी हैं। मुआशरे[8] को सुधारने, या ज़ुल्म करने वालों पर लानत भेजने, या इन्तज़ामिया[9] और सियासी[10] हल्क़ों पर तंज़ करने, या किसी को नसीहत[11] करने जैसा कोई तक़ाज़ा मेरे सामने कभी नहीं रहा। ये ग़ज़लें मेरे इर्द-गिर्द के माहौल से मुख़ातिब[12] मेरा इनफिरादी[13] ''रेस्पान्स'' हैं। मेरे ज़ियादातर मज़ामीन[14] ''इन्टरपर्सनल रिलेशनशिप्स''[15] के किसी न किसी पहलू से वाबस्ता[16] हैं, और इन रिश्तों की मुख़्तलिफ[17] और मुतवातिर[18] बदलती हुई शक्लें पहचानने और उन्हें ''इन्टरप्रेट'' करने की

1. जीवन-संगिनी 2. केवल 3. गंभीरता 4. पाण्डुलिपि 5. ढंग 6. निर्धारित 7. उद्देश्य 8. समाज 9. प्रशासन 10. राजनैतिक 11. उपदेश 12. सम्बोधित 13. वैयक्तिक 14. विषयवस्तु (बहु.) 15. आपसी संबंधों 16. जुड़े हुए 17. विभिन्न 18. निरन्तर.

एक कोशिश। हाँ, बाज़ शेरों में ख़ालिस ''ट्रैडिशनल'' शायरी का तग़ज्ज़ुल भी ज़रूर मिल सकता है।

दूसरी बात यह कि मैं ने उर्दू की बाक़ायदा तालीम[1] कभी हासिल नहीं की, या यूँ कहूँ कि चाहते रहने के बावजूद नहीं कर पाया हूँ। इसलिए ज़बान पर पकड़ और 'वोकेबुलेरी'' बहुत कमज़ोर हैं। नतीजतन[2], बोलचाल की आमफहम[3] ज़बान में लिखना मेरी मजबूरी है। (हालाँकि कभी कभी लगता है कि यह मजबूरी एक ताक़त भी हो सकती है।) बहुत मुमकिन है कि ज़ियादा रिवायत-पसन्द[4] और तकनीक की बारीकी में यक़ीन रखने वाले उर्दूदानों को मेरी ग़ज़लों में कई ख़ामिया मिलें। इसलिए मेरा साफ बयान कर देना मुनासिब होगा कि उर्दू शायरी की आम रिवायत के ख़िलाफ़ मैं किसी उस्ताद[5] से बाक़ायदा इस्लाह नहीं लेता। यह मेरा अपना फ़ैसला है, और मेरे अशआर में ज़बान और फ़न की तमाम ग़लतियाँ मेरी मानी जायें।

ग़ज़लों के बारे में बस इतना ही, क्योंकि इनके मुँह में अपनी ज़बान भी है।

हाँ, चलते-चलते दो लफ़्ज़ इस मजमूए के ''फॉरमैट''[6] के बारे में। मैंने उर्दू का ज्यादातर कलाम देवनागरी में शाये ज़िल्दों में ही पढ़ा है। इसलिए जानता हूँ कि मेरी तरह के लाखों लोग हैं जिन्हें उर्दू शायरी का बेइन्तहा ज़ौक़ है लेकिन उन्हें उर्दू रस्मुल-ख़त[7] पढ़ना नहीं आता। कोई भी उर्दू शायरी की किताब जब उर्दू रस्मुल-ख़त के अलावा देवनागरी में भी छपती है तो ये सब लोग भी उसके पढ़ने वालों की तादाद में शामिल हो सकते हैं। इसीलिए मैं ने सोचा कि क्या ही अच्छा हो अगर एक ही ज़िल्द[8] में दोनों लिपियों और ज़बानों के पढ़नेवालों तक पहुँच सकने की कुव्वत[9] हो। शायद मुझे यह भी ख़याल रहा होगा कि इब्तदाई[10] तौर पर मैं

1. औपचारिक शिक्षा 2. फलस्वरूप 3. सभी की समझ में आने योग्य 4. परम्परा निर्वाह पसन्द करने वाले 5. गुरू 6. प्रस्तुतीकरण 7. उर्दू की लिपि 8. पुस्तक 9. क्षमता 10. प्रारंभिक

हिन्दी का कवि रहा हूँ। मेरी पहली किताब (''टूटा हुआ पुल', कविताएँ, पराग प्रकाशन 82) भी हिन्दी-देवनागरी में छपी थी। अब सिर्फ उर्दू रस्मुलख़त में छपा मजमूआ[1] अच्छा न लगेगा। मन में यह बात भी ज़रूर रही होगी कि आमफ़हम अल्फ़ाज़ में होने की वजह से हिन्दी के हल्क़ों में ये गज़लें आसानी से समझी और पसन्द की जायेंगी।

बहरहाल, उम्मीद करता हूँ कि हिन्दी और उर्दू दोनों ही ज़बानों के हल्क़ों में कुछ-कुछ लोगों को मेरी यह किताब पसन्द आयेगी। दोनो ज़बानों और दोनों ज़बान की लिपियों को एक दूसरे के क़रीब लाने की यह कोशिश इस तरह की और कोशिशों के लिए शायद एक नयी राह बनाये, और शायद यह किताब उन लोगों को भी काम की लगे जो उर्दू रस्मुल-ख़त सीखने की कोशिश में लगे हैं।

तो लीजिए, ''रात गये'' आप के सामने है। और मैं आपकी राय जानने का मुन्तज़िर[2]।

बड़की कोठी
सिविल लाइन्स, अजमेर

प्रियदर्शी ठाकुर 'ख़याल'

1. संकलन 2. प्रतीक्षारत

नज़्रे-टौंक

जब से वो प्यारा नगर छोड़ दिया है मैं ने
तब से लगता है कि घर छोड़ दिया है मैं ने
उसकी यादों से हैं वाबस्ता[1] ये आँसू मेरे
इसलिए आँखों को तर छोड़ दिया है मैं ने

1. जुड़ा

रात गये

बैठे रहना कहीं ख़ल्वत[1] में कभी रात गये
ढूंढना उनको सितारों में यूँ ही रात गये

ये जो शबनम[2] है सितारों की तरह सब्ज़े[3] पर
चांद ही रोया है ये अश्क अभी रात गये

इन उजालों के हवालों से न ढूंढो मुझको
मुझे पाओगे तो पाओगे कभी रात गये

गिर के पानी पे किरन चांद की बिजली-सी हुई
कांपता जिस्मे-समन्दर[4] है अभी रात गये

चांदनी बन के सरे-शाम जो बरसी थी अभी
मेरी बाहों में सिमट आयी वही रात गये

अब ये आलम है कि नींदों में मेरी ख़्वाब नहीं
ख़्वाब आये जो अगर नींद गयी रात गये

रिश्ते आँसू के न जोड़ो कि मुसाफ़िर हूँ मैं एक
मैं चला जाऊंगा चुपके से कभी रात गये

1. एकान्त 2. ओस 3. हरियाली 4. समुद्र का शरीर.

याद आये हैं मुझे आपकी महफ़िल में रक़ीब
चांद बादल में घिरा है जो कभी रात गये

शामे-फ़ुरक़त[2] में वो पीते हैं ज़रूरत से सिवा[3]
कि कहीं होश न आ जाये कभी रात गये

हम तो पीते हैं ख़ुशी में भी तबीयत से शराब
कि न बन जाये कहीं दर्द, ख़ुशी रात गये

अब न वो उम्र न वो साथ न वो दौरे-सुबू[4]
याद ख़ूब आये हो ऐ दोस्त अभी रात गये

क्या कहा, याद तुम्हारी कि भुला दी मैं ने
बोलो ख़ुरशीद[5] भी देखा है कभी रात गये

गुनगुनाओगे ये अशआर[6] मेरे तुम भी कभी
सोचता हूँ कई रातों से यही रात गये

सारे दिन उनके ख़यालात भी आये न हमें
ये 'ख़याल' आया है हमको तो अभी रात गये

1. प्रतिद्वन्द्वी 2. विरह की शाम 3. अधिक 4. शराब का दौर 5. सूर्य 6. ग़ज़ल के शेर (बहु.)

ग़ज़ल

शायद कभी न पाओ मुझे बेहिजाब[1] तुम
जब तक उतार आओ न अपना नक़ाब तुम

अच्छाई क्यूँ न देखें, जो ये फ़ैसला करें
'कितने ख़राब हम हैं कि कितने ख़राब तुम

पहलू-ए-हुस्न[2] में मुझे कोई जगह मिले
कांटा ही बन रहूँ मैं, अगर हो गुलाब तुम

मैं हूँ तुम्हारा, सिर्फ़ तुम्हारा ही हूँ मगर
मेरे सवाल का भी तो कुछ दो जवाब तुम

मैं तो ख़याले-यार[3] में सहरानवर्द[4] हूँ
किसकी तलाश में हो मगर ऐ सराब[5] तुम

मन्दिर में बैठे-बैठे भी जूते पे ध्यान हो
इतना, खुदा न करना मुझे कामयाब[6] तुम

धब्बों में आँसुओं के ही खो जाओगे 'ख़याल'
खोलोगे जब कभी ये पुरानी किताब तुम

1. बे परदा 2. सौन्दर्य के निकट 3. प्रेयसी की स्मृति 4. रेगिस्तान में भटकता हुआ 5. मृगतृष्णा 6. समृद्ध, सफल

ग़ज़ल

हाय किस नाज़ से वो अपना पता देते हैं
बेसबब क्यूँ बुझे शोलों को हवा देते हैं

बनने लगती है कोई बात जो बनते-बनते
मुस्कुरा कर वो कोई बात बना देते हैं

ग़ैरहाज़िर था तो इनआम दिये जाते थे
आज मैं हूँ तो मुझे लोग सज़ा देते हैं

अब भी की जाती है महसूस बुतों में हरकत[1]
हम जो माज़ी[2] के सराबों[3] को सदा देते हैं

हम ग़रीब इसके सिवा और तुझे क्या देते
सायबाँ[4] हम तेरे साये को दुआ देते हैं

काँप उठता है मेरा दिल, वो कभी जब यूँ ही
रेत पर लिख के कोई माम मिटा देते हैं

1. स्पन्दन 2. अतीत 3. मृगतृष्णाएँ 4. साया देने वाला

ग़ज़ल

दिल के वीराने में कुछ देर को याद आयी है
मेरी क़िस्मत का जो हासिल[1] है वो तनहाई है

जो न छँटती है न खुल कर ही बरसती है कभी
दिल पर इक ऐसी उदासी की घटा छायी है

ख़्वाब सोये हुए फिर से न कहीं चीख़ उठें
बाद बरसों के शबे-ग़म[2] हमें नींद आयी है

उनके दामन पे भी उतरेगी सितारे बन कर
मेरी पलकों पे जो ये शाम उतर आयी है

याद और ख़्वाब में कुछ फ़र्क़ नहीं है शायद
ख़्वाब बन-बन के हमें नींद में याद आयी है

अब नहीं क़ुव्वते-परवाज़[3] वो पहली-सी 'ख़याल'
याद भटकी हुई ख़ुशबू की तरह आयी है

1. उपलब्धि 2. ग़म की रात 3. उड़ने की ताकत

ग़ज़ल

अब ज़िन्दगी में कोई फ़साना नया नहीं
दिलबर की दिलबरी में मगर क्या नया नहीं

दस्तक नहीं किसी की, हवा का फ़रेब है
बरसों यहाँ तो कोई भी आया नया नहीं

चेहरे नये हैं फिर भी अदाकारियाँ वही
परदे नये हैं सिर्फ़, तमाशा नया नहीं

ऐलाने-सुब्हे-नौ[1] तो हर इक शाह ने किया
आया जहाँ में फिर भी ज़माना नया नहीं

शायद तुम्हारे हाथ पे हो ज़ख़्म ये नया
पहलू में यूँ गुलाब के कांटा नया नहीं

मैय्यत[2] पे मेरी आये हैं वो इस 'ख़याल' से
निकलेगा रोज़ इसका जनाज़ा नया नहीं

1. नई सुबह की घोषणा 2. अन्तिम संस्कार

ग़ज़ल

तेरे पैमाने में भी क़हत-ए-मुरव्वत[1] साक़ी
अब है उठ जाने की दुनिया से तबीयत साक़ी

तू अगर ज़हर भी दे दे तो मैं पी जाऊंगा
जान भी लेने की है तुझको इजाज़त साक़ी

सायाये-ज़ुल्फ़े-परीशाँ[2] में कहीं गुम हुई शम्अ
वरना मैख़ाने में इस वक़्त ये ज़ुल्मत[3] साक़ी

नामाबर[4] नाम से मैख़ाने के कतराता है
कैसे पहुँचायें तुझे अपनी इबारत साक़ी

शम्अ लड़ती है हवाओं से भी जलने के लिये
लौ की करते हैं वफ़ा वाले हिफ़ाज़त साक़ी

ये करम आख़िरी कर दे कि तू नासेह[5] मत बन
बख़ुदा, करते रहे हैं तेरी इज़्ज़त साक़ी

निकल आते ये 'ख़याल' अश्क की सूरत इक दिन
न किया होता अगर ज़ब्ते-मोहब्बत साक़ी

1. मुरौवत का अकाल 2. बिखरी हुई जुल्फों की छाया 3. अंधेरा
4. डाकिया 5. उपदेशक

ग़ज़ल

हमने जब भी तुम्हारा नाम लिया
ज़ब्त से ख़ूब दिल ने काम लिया

आह निकली किसी के लब से कहीं
हमने क्यूँ दिल को अपने थाम लिया

दर्द मद्धम है, हाल बेहतर है
हमने हाथों में जब से जाम लिया

क्या बताऊँ कि मेरी आँखों ने
उनकी नज़रों से क्या पयाम[1] लिया

हम तो फ़ुरक़त[2] में मर गये होते
दर्द ने बढ़ के दिल को थाम लिया

हुस्न की शम्अ बुझ गयी आख़िर
वक़्त ने कैसा इन्तक़ाम लिया

मुन्तज़िर[3] अब नहीं है कोई 'ख़याल'
ढूंढ मैं ने हर इक मक़ाम लिया

1. संदेशा 2. विरह 3. इन्तज़ार करता हुआ

ग़ज़ल

बारिशे-संग[1] है कि महफ़िल है
आईना है कि ये मेरा दिल है

आपका इसमें कुछ क़ुसूर नहीं
मेरी फ़ितरत[2] में रंज शामिल है

तुझसे मुमकिन है सुलह भी लेकिन
ख़ुद से समझौता फिर भी मुश्किल है

फिर मोहब्बत की बात करते हो
भूल बैठे कि ये वही दिल है

हाथ को हाथ तक नहीं दिखता
दूर दरिया से कितना साहिल है

न सही रास्ता तेरा लेकिन
जानते हैं कि तू ही मंज़िल है

उससे पूछा 'ख़याल' ने रस्ता
ये न समझा कि बुत मुक़ाबिल[3] है

1. पत्थर की वर्षा 2. प्रकृति 3. सामने

ग़ज़ल

जज़्बए-दिल[1] ही मेरी आँखों में कम रहता है
उस पे फिर उनको दिखावे का भरम रहता है

उनको आता ही नहीं मेरी मोहब्बत का यक़ीं
मेरी आँखों में इसी बात का ग़म रहता है

जिन दिनों होती है कुछ और ज़ियादा की उमीद
आपका हम पे करम और भी कम रहता है

आप चाहें तो शबे-ग़म की गवाही ले लें
कि बग़ैर आप के आँखों ही में दम रहता है

खिड़कियों से तो चरागाँ[2] है इमारत लेकिन
इसके तहख़ानों की तारीकी में ग़म[3] रहता है

कमनसीबी जो नहीं है तो भला ये क्या है
दोस्तों को भी अदावत का भरम रहता है

बेवफ़ा पहले से थे, उम्र भी अब होने लगी
याद रखते भी नहीं याद भी कम रहता है

1. दिल की भावना 2. रौशन 3. अंधेरे में दु:ख

कुफ़्र[1] की ग़ैर को तू देता है तोहमत लेकिन
खुद तेरे दिल में शबो-रोज़[2] सनम[3] रहता है

बाद मुद्दत ज़रा बेहतर है 'ख़याल' आपका हाल
दर्द रहता है मगर पहले से कम रहता है

1. इस्लाम में नास्तिक 2. रात-दिन 3. मूर्ति, प्रेमिका

ग़ज़ल

तू जब भी याद आये तो हो जाये इक ग़ज़ल
कोई जो दिल दुखाये तो हो जाये इक ग़ज़ल

अपने लगें पराये तो हो जाये इक ग़ज़ल
दिल फिर फ़रेब खाये तो हो जाये इक ग़ज़ल

है गुम तिलिस्मे-शब[1] में जो बीती रूतों की धुन
होटों पे लौट आये तो हो जाये इक ग़ज़ल

बरसात के दिनों में तेरे गेसुओं की याद
दिल पर घटा-सी छाये तो हो जाये इक ग़ज़ल

मेरी ख़ता हो फिर भी अगर रूठने के बाद
तू ही मुझे मनाये तो हो जाये इक ग़ज़ल

माज़ी[2] के पत्थरों पे जो यादों की तेज़ धूप
पाँव मेरे जलाये तो हो जाये इक ग़ज़ल

तेरा 'ख़याल' आ तो रहा है मुझे मगर
ऐ काश और आये तो हो जाये इक ग़ज़ल

1. रात का तिलिस्म 2. अतीत

ग़ज़ल

कसे-दीदारे - आफ़ताब[1] कहाँ
मेरी नज़रों में इतनी ताब[2] कहाँ

इतने आसान-से सवाल का भी
कोई आसान-सा जवाब कहाँ

नींद तनहाइयों में टूटी है
महफ़िलों के गये वो ख़्वाब कहाँ

जितनी पी, प्यास उतनी और बढ़ी
ज़द[3] में आया मेरी सराब[4] कहाँ

तल्ख़ियां, हैफ़[5] अपनी मिट्टी में!
अब खिलेंगे मेरे गुलाब कहाँ

बेकसों के लहू का धब्बा है
धो सकेगा इसे सवाब[6] कहाँ

1. सूर्य को देखने की शक्ति 2. ताकत 3. नियन्त्रण 4. मृगतृष्णा
5. अफसोस 6. पुण्य

नेक बन्दे ख़ुदा के होंगे मगर
इस ज़माने में कामयाब कहाँ

इतने ग़म ये ज़रा-सी जान मेरी
आंधियों में बचे हबाब[1] कहाँ

दूरियाँ कुरबतों[2] में लिपटी हैं
मेरी चाहत में इज़्तराब[3] कहाँ

किस तसव्वुर में, सोच में, ग़म में
डूबा जाता है माहताब कहाँ

फिर शजर[4] पर बहार आ तो गयी
उस बला का मगर शबाब कहाँ

वो मोहब्बत भी कम ही करता है
ग़म भी देगा तो बेहिसाब कहाँ

मेरा साक़ी ही बन गया नासेह[5]
अब मिलेगी मुझे शराब कहाँ

1. बुलबुला 2. निकटता 3. असमंजस 4. पेड़ 5. उपदेशक

कब तलक रोऊँ जाने वाले को
हौसला ग़म का बेहिसाब कहाँ

तुम ज़माने की बद-नज़र से डरो
फिरते रहते हो बेनक़ाब कहाँ

क्या कहूँ कितनी बार टूटा दिल
ऐसी बातों का अब हिसाब कहाँ

यूं ही क़िस्मत को लोग रोते हैं
हम-से होंगे कोई ख़राब कहाँ

ये भी वादा तुम्हारा झूठा है
तुम पढ़ोगे मेरी किताब कहाँ

अब नसीहत 'ख़याल' करने लगे
इन्हें मिलती है अब शराब कहाँ

1. बुरी नज़र

ग़ज़ल

गरचे[1] ये शाम भी मुझ पर तो बहुत भारी है
इससे बढ़ कर भी कहीं ख़ौफ़े-सहर[2] तारी[3] है

हर नफ़स सोचता हूँ अबके मेरी बारी है
ये सफ़र है कि. ये तैय्यारी ही तैय्यारी है

रो के काटेंगे तो हो जायेगी उल्फ़त रूसवा
हँस के झेलें कि सज़ा दी हुई तुम्हारी है

अब तो मुश्किल ही से शायद इसे पहचान सको
बरसों पहले की ये तस्वीर यूँ हमारी है

फाँसी लगनी है जिसे कल ही, उसे पूछ के देख
ज़िन्दगी कितनी हसीं[4], जान कितनी प्यारी है

बज़्म[5] तो बज़्म, मेरा घर भी अंधेरा न हुआ
ज़िन्दगी मौत से इस तरह कभी हारी है!

अब आँसुओं से चुका क़र्ज़ ये शबे-ग़म का
इतना हँस-हँस के शबे-वस्ल[6] जो गुज़ारी है

1. हालाँकि 2. सुबह का डर 3. छाया हुआ 4. हसीन
5. महफ़िल 6. मिलन की रात

दिल की बरबादी के आसार नज़र आते हैं
ऐसी पुरकैफ़[1] फ़ज़ा और बेक़रारी है

दु:ख हुआ होगा तुम्हें भी तो इसे देख के अब
मेरी आँखों में जो ये चुप-सी समझदारी है

जो किसी ग़ैर के मुँह से न लगी मुझको बुरी
तेरे होटों से वही बात ज़ख़्मकारी[2] है

माँग कर प्यार तो क्या भीख भी मिले न जहाँ
दिल उसी शहरे-तमन्ना[3] में इक भिखारी है

माँ ये बाज़ी तो हरेक रंग में हारेगी 'ख़याल'
भाइयों में ही अगर जंगे-फ़ना[4] जारी है

1. सुखदायी 2. घाव करने वाली 3. प्रेम नगर 4. मृत्यु तक का युद्ध.

ग़ज़ल

तेरे लहजे[1] में जो इकरारे-वफ़ा[2] पाया है
चैन तब जा के कहीं दिल ने ज़रा पाया है

हौसला मेरा सितमगर ने बजा[3] पाया है
आज फिर दिल ने मोहब्बत का सिला पाया है

बंद आँखों से कभी आज भी जब याद किया
एक दुल्हन-सी तुम्हें मैं ने सदा पाया है

यूँ तबस्सुम ने मिटाये हैं वो माथे के शिकन
आज कुछ हमने तुम्हें तुम से जुदा पाया है

रात गुलशन-सा कोई ख़्वाब में देखा मैं ने
सुब्हदम[4] होटों में इक फूल दबा पाया है

डूब जाने के सिवा अब कोई चारा ही नहीं
तेरी आँखों ने तलातुम[5] का नशा पाया है

खेल क़िस्मत का है सब, बज़्म[6] सजाये है कोई
और कोई याद की बस शम्अ जला पाया है

1. स्वर 2. प्रेम की स्वीकृति 3. ठीक 4. सवेरे 5. समुद्री तूफान 6. महफिल

न मिटा पाया तेरा प्यार कभी दिल से 'ख़याल'
और न हालत ही तुझे अपनी बता पाया है

* *

सर ऊँचा कर के चलते हैं, ये ठोकर जान के खायी है
ग़ैरत की क़ीमत देनी है, ये हमने मान के खायी है
तू लाख सिकन्दर ख़ुद को समझ, बाज़ू पर अपने नाज़ भी कर
ये चोट तो लेकिन दानिस्ता, हाँ, हमने ठान के खायी है

ग़ज़ल

आ जाइए क़रीब कभी बेहिजाब[1] भी
अब देख लेने दीजिए अपना शबाब[2] भी

चाहे लिखा हो कुछ भी मगर उनका ख़त तो है
किसको यक़ीन था कि वो देंगे जवाब भी

अंधों से कुछ न पूछिये क्या कुछ लिखा-पढ़ा
बीनाई[3] जब नहीं तो करे क्या किताब भी

चाहा तो ये नहीं था मगर हो यहा गया
आँखें खुली हैं मेरी तो टूटे हैं ख़्वाब भी

बदनाम हो रहे हैं मगर कोई ग़म नहीं
हम तो तुम्हारे वास्ते होंगे ख़राब भी

हर दोस्त साथ छोड़ के आख़िर चला गया
रास आ सकी न मुझको तो ज़ालिम शराब भी

अपने सिवा तो उनको किसी का नहीं 'ख़याल'
क्यूँ मांगते हैं मुझसे वो मेरा हिसाब भी

1. बेपरदा 2. यौवन 3. आँखों की रौशनी

ग़ज़ल

ये मोहब्बत का असर है मेरा सादा चेहरा
हो गया है जो तेरी आँख का तारा चेहरा

मेरी फ़रियाद सुनी, सुन के हँसे और कहा
कभी देखा भी है आईने में अपना चेहरा

तेरी चाहत के उजालों की चमक था कल तक
हाय ये ग़र्दिशे-ऐय्याम[1] का मारा चेहरा

कभी आँखें, कभी आरिज़[2] तो कभी होंट फ़क़त[3]
काश आये तो कभी याद वो पूरा चेहरा

आज सहरा-ए-तसव्वुर[4] पे अचानक ही 'ख़याल'
माहे-कामिल[5] सा चमक उठ्ठा है उनका चेहरा

1. गर्दिश के रात-दिन 2. गाल 3. केवल 4. कल्पना का रेगिस्तान
5. पूरा चांद

ग़ज़ल

कल की-सी जो बात लगे है, आज पुरानी हो गयी पल में
अभी-अभी तो शुरू हुई थी, ख़त्म कहानी हो गयी पल में

दिल तोड़ा पहले तो उसने, उस पर दिल को रोग लगा
कैसा चारागर[1] था अपना, ख़ाक जवानी हो गयी पल में

पिछले जनम का नाता था या मेरा मुक़द्दर जागा था
मैं ने कहा तू मेरी हो जा, मेरी दिवानी हो गयी पल में

तेरी चाहत गोया मन में इक जज़्बात की आँधी थी
दिल टूटा जब वही पिघल कर आँख का पानी हो गयी पल में

1. उपचार करने वाला

ग़ज़ल

अश्क आँखों में भरे, यास[1] लिये बैठा हूँ
अपनी तन्हाई का एहसास लिये बैठा हूँ

तेरी ख़ुशबू से मुअत्तर[2] है शबे-तन्हाई
ऐसा लगता है तुझे पास लिये बैठा हूँ

तू समन्दर की तरह ज़ह्न में[3] लहराता है
मैं किनारे पे तेरी प्यास लिये बैठा हूँ

नाउमीदी भी मुकम्मल[4] नहीं होती मेरी
लौट आने की तेरे आस लिये बैठा हूँ

1. दु:ख 2. सुगंधित 3. मन में 4. पूर्ण

ग़ज़ल

दे रहे हो मुझे सज़ा लेकिन
जानते हो कि बेख़ता[1] लेकिन

इससे नज़दीक और क्या आते
रह गया कितना फ़ासला लेकिन

हाल पर मेरे छोड़ देते मुझे
उनसे ये भी न हो सका लेकिन

आँख रूसवाइयों से डरती रही
दिल मेरा खुल के रो लिया लेकिन

वो मेरे साथ-साथ चलता था
मैं उसे ढूंढता रहा लेकिन

हैं दुआएँ असर-तलब[2] अब भी
आ गयी काम बद्दुआ लेकिन

साथ तुम थे तो हो गया आसाँ
गो[3] सफ़र था बहुत कड़ा लेकिन

1. बिना अपराध के 2. असर की इच्छुक 3. हालाँकि

तू मेरी ज़िन्दगी का हासिल[1] है
मैं भी कुछ हूँ तेरा, बता लेकिन

आप कह लीजिए शराब को ज़ह्र[2]
हम कहेंगे इसे दवा लेकिन

दिल किसी काम का न होगा 'ख़याल'
आप के नाम कर दिया लेकिन

1. उपलब्धि 2. ज़हर

ग़ज़ल

ऐ दिले-मुज़्तर[1] शबे-ग़म[2] की सहर[3] हो जायेगी+
रौशनी भी, मेरी जाँ, थोड़ा ठहर हो जायेगी

टूट कर गिर जायेगा फिर ये अंधेरों का निज़ाम[4]
उनके आते ही चरागाँ[5] रहगुज़र[6] हो जायेगी

ये सरापा[7] हुस्न ले कर फिरिये मत इस शह्र में
मानिये मेरा कहा वरना नज़र हो जायेगी

वो बिखेरे ज़ुल्फ़ अपनी साथ मेरे हो लिये
ज़िन्दगी अब ख़ुश्बुओं का इक सफ़र हो जायेगी

दिल मैं पहले दे चुका हूँ, वो भी कम है आपको
जाँ[8] बची है, सो निछावर आप पर हो जायेगी

इस क़दर बेबाक[9] नज़रों से जो देखोगे मुझे
दोस्ती की दुश्मनों को भी ख़बर हो जायेगी

उनके बाद अब अपनी आँखें भी गिरा ही दें हमें
उनके हाथों जो रही पूरी कसर हो जायेगी

+ मिसरा-तरा जनाब आबिद आक़िल टौंकी ने दिया 1. बेचैन दिल 2. दुःख की रात 3. सुबह 4. राज्य, प्रभुत्व 5. रौशनी से भरपूर 6. रास्ता 7. सर से पाँव तक 8. जान 9. स्पष्ट, खुला.

ग़ज़ल

खुली आँख और सपना है ये
मेरा नज़रिया[1] अपना है ये

मैं हूँ इस तन्हाई का मालिक
और मुक़द्दर अपना है ये

दुःख की रात का एक सहारा
तारों का जो तकना है ये

किसने पढ़ी हैं कल की लकीरें
आज तो लेकिन अपना है ये

दिल पर बस किसका रहता है
हाँ, बेकार तड़पना है ये

यही तो आँसू थामे हुए है
वैसे पलक झपकना है ये

आख़िर उसमें पान बंधेगा
जिस सफ़हे[2] पे छपना है ये

कै दिन दुनिया की आँखों में
और 'ख़याल' खटकना है ये

1. दृष्टिकोण 2. पन्ने.

ग़ज़ल

जान के दिल को खाना अच्छा
उस पर जान को रोना अच्छा

इमाँ खो कर पाने वालों
यूँ पाने से खोना अच्छा

इक मजबूर हँसी हँसने से
राहे वफ़ा में रोना अच्छा

अच्छा उसको चाहो अगर तुम
उसके लिये भी होना अच्छा

अपना दिले-बीमार 'ख़याल' अब
मुश्किल ही है होना अच्छा

ग़ज़ल

डूब जाना है रवा[1] अब, तू ठहरता क्यूँ है
मुझपे आया है तुझे प्यार तो डरता क्यूँ है

प्यार को प्यार तो क्या उसने तसल्ली भी न दी
तू फिर उस जान के दुश्मन ही पे मरता क्यूँ है

एक क़तरा भी बहाने की नहीं ताब[2] तो फिर
मेरी आँखों में अबस[3] ख़ून उतरता क्यूँ है

आज कल इतनी नवाज़िश[4] है, करम है उनका
सोचता हूँ कि मेरा वक़्त गुज़रता क्यूँ है

वो ख़फ़ा है तो रहे, इतना बता दे मुझको
मेरे आने की ख़बर पा के सँवरता क्यूँ है

यूँ असीरी[5] से हूँ मानूस[6] कि अब जाना कहाँ
फिर भी सैय्याद[7] मेरे पंख कतरता क्यूँ है

और बदरंग हुई जाती है कुछ सूरते-हाल[8]
रंगे-उम्मीद का शीराज़ा[9] बिखरता क्यूँ है

1. उचित 2. शक्ति 3. व्यर्थ 4. कृपा 5. कैद में होने की स्थिति
6. परिचित, अंतरंग 7. बहेलिया, पक्षी को कैद में रखने वाला
8. हालात की शक्ल 9. क्रम.

ग़ज़ल

वो कि आये भी यहाँ, और गले मिलने लगे
फूल की तरह भला दिल भी कहीं खिलने लगे

तेरी रूसवाई न हो जाये कहीं मेरे सनम
तू जो वीराने में चुपचाप मुझे मिलने लगे

ज़ख़्म का नाम न दो, फूल कहो अब इनको
मौसमे-गुल[1] में भी हर सम्त[2] यही खिलने लगे

इनको तो वक़्त का मरहम भी नहीं है हासिल
क्या अजब है जो नये ज़ख़्म मेरे छिलने लगे

हो गयी ख़ुश्क ज़ुबाँ हौसले काफ़ूर हुए
उनसे होते ही मुख़ातिब[3] मेरे लब सिलने लगे

1. फूलों का मौसम 2. हर तरफ़ 3. सम्बोधित करते ही

ग़ज़ल

तुम भी गोया[1] निभा रहे हो मुझे
रस्मे-दुनिया[2] सिखा रहे हो मुझे

तय न हो पाया जो कभी मुझसे
तुम वो इक फ़ासला रहे हो मुझे

काम आयेगा उम्र-भर मेरे
तुम जो ग़म दे के जा रहे हो मुझे

शबे-हिज्राँ[3] में ये ग़नीमत है
तुम बहुत याद आ रहे हो मुझे[+]

अपनी सूरत से ख़ूब वाक़िफ़ हूँ
आइना क्या दिखा रहे हो मुझे

हश्र[4] के दिन से क्या नहीं डरते
इस क़दर क्यूँ सता रहे हो मुझे

अपना दुश्मन हूँ दोस्त मैं ख़ुद ही
किसकी ख़ातिर बचा रहे हो मुझे

आजतक जैसे मुझको जाना नहीं
तुम तो यूँ आज़मा रहे हो मुझे

+ मिसरा तरा जनाब आबिद आक़िल ने दिया था.
1. जैसे 2. दुनिया की रीत 3. विरह
की रात 4. ईश्वर के समक्ष फैसले का दिन.

नज़्रे-दोस्त

अपने दिल से भी दुश्मनी कर लूँ
और दुश्मन से दोस्ती कर लूँ
तू ज़रा प्यार कर के देख मुझे
जो भी तू चाहे मैं वही कर लूँ

तू न चाहे तो कैसे समझाऊँ
मैं जतन चाहे जितने भी कर लूँ
फिर न रोना भी मेरे मरने को
तुझसे चाहा था दोस्ती कर लूँ

रात मुझको भी ये 'ख़याल' आया
तुझसे वादा ये आख़िरी कर लूँ
काम आये जो मेरी जाँ तेरे,
दोस्त, उस दिन मैं ख़ुदकुशी कर लूँ.

ग़ज़ल

दुआएँ मुझसे मिलने की बराबर मांगता होगा
जहाँ भी हो, मेरी ही याद में वो मुब्तिला[1] होगा

बता भी तो नहीं पाया उसे मजबूरियाँ अपनी
न जाने वो मेरे बारे में क्या कुछ सोचता होगा

किसी का ज़िक्र होते ही न वो इतना ख़फ़ा होता
यक़ीनन दिल ही दिल में वो भी मुझको चाहता होगा

पहाड़ों की मुलायम धूप उतरी है ढलानों से
किनारे झील के अक्सों[2] का मजमा लग रहा होगा

न जाने क्यों छलक उट्ठी हैं आँखें आज फिर ऐसे
मेरी ख़ुशियों का पैमाना ही शायद भर गया होगा

तुम्हारी बेवफ़ाई की मुनासिब ये सज़ा होगी
तसव्वुर[3] मेरा होगा, पास कोई दूसरा होगा+

अब उसकी बेनियाज़ी[4] का गिला[5] भी क्या करें शायद
उसे जो कुछ दिया हमने यही उसका सिला[6] होगा

1. व्यस्त 2. परछाइयाँ 3. ध्यान, 4. बेरुखी 5. शिकायत 6. प्रतिदान
+ मिसरा तर। जनाब राशिद टोंकी ने दिया

चलो फिर ढूंढ कर देखें अंधेरे की फ़सीलों[1] में
यहाँ से भी निकलने का कोई तो रास्ता होगा

अगरचे साथ देने की कसम उसने भी खायी थी
मेरी तन्हाई कहती है तुझे धोखा हुआ होगा

'ख़याल' अपनी मोहब्बत में कमी आने न देना तुम
भले ही हो अगर उनकी तरफ़ से फ़ासला होगा

1. सीमा, चारदीवारी.

ग़ज़ल

मंजिल भी दूर, वक़्त भी कम आइए चलें
थोड़ा-सा और तेज़-क़दम आइए चलें

दुनिया के भूल जायें सितम आइए चलें
साग़र[1] में कर दें ग़र्क़[2] ये ग़म आइए चलें

ज़र्रे[3] भी गर्दे-राह[4] के मंज़िल से कम नहीं
साँसों का क़ाफ़िला है जनम आइए चलें

राहे-वफ़ा[5] में झूठी तो अव्वल न खाते हम
खा ली तो फिर निबाहें क़सम आइए चलें

चारा नहीं है कोई ये जायेगा जाँ के साथ
है वह्म लाइलाज अलम[6] आइए चलें

हम दें तो किस यक़ीन से अब दें उसे सदा[7]
पत्थर-सा हो गया है सनम[8] आइए चलें

आराम की 'ख़याल' कोई इन्तहा भी है
ले जो लिया हो आप ने दम आइए चलें

1. प्याला 2. डूबो देना 3. धूल-कण 4. रास्ते की गर्द 5. प्रेम की राह 6. दु:ख 7. पुकार 8. प्रेयसी.

ग़ज़ल

सिर्फ़ वादा न करे वादा निभाये भी कोई
जान कहता है तो फिर ज़ान-सा चाहे भी कोई

प्यार करना है तो बस प्यार किये जा उसको
क्या ज़रूरी है उसे जा के बताये भी कोई

न सही ख़त न इबारत[1], इक इशारा ही सही
मैं तो आ जाऊँ मगर मुझको बुलाये भी कोई

प्यार पायेगा तेरा कोई नसीबों वाला
पर ये कैसे हो तुझे और न चाहे भी कोई

अपना आबाद नगर ख़ुद ही उजाड़े कैसे
किस तरह दिल से तेरी याद भुलाये भी कोई

कैसे दिन-रात सराहे तो सराहे भी कोई
दम ही घुट जायेगा इस तरह जो चाहे भी कोई

कब सज़ाओं से भी डरता है 'ख़याल', आप मगर
देख तो लें कि भला उसकी ख़ता है भी कोई

1. लिखत.

ग़ज़ल

ज़ख़्मे-दिल[1] दे के वहो आप न भर जाये कहीं
हादसा ये भी मुझी पर न गुज़र जाये कहीं

रोज़ खाता है क़सम प्यार में मर जाने की
हाय, दीवाना तेरा सच ही न मर जाये कहीं

आज इस दौर के हालात पे रोने के लिये
आँख आँसू की जगह ख़ूँ से न भर जाये कहीं

एक साया भी दरख़्तों का न राहों में बचा
कि जो थक जाये मुसाफिर तो ठहर जाये कहीं

मारफ़त हो जो रक़ीबों[2] के, बहुत मुमकिन है
तू कहीं और रहे और ख़बर जाये कहीं

अपना दिल अपने गवाहों में न शामिल कीजे
ऐन मौक़े पे न कमबख़्त मुकर जाये कहीं

आप की तरह निकल जाये बचा कर आँखें
मुझसे धोखा न मेरी जान भी कर जाये कहीं

1. दिल का घाव 2. प्रतिद्वन्द्वियों के माध्यम से

मौत दरिया है तो ये ज़ीस्त[1] सफ़र कश्ती का
जाने कब कौन किसी घाट उतर जाये कहीं

अब्रे-बाराँ[2] की तरह आज बरस जाये 'ख़याल'
उनकी आँखों से जो मिल दीद-ए-तर[3] जाये कहीं

1. जीवन 2. बरसात के बादल 3. रोती हुई आँख

ग़ज़ल

वादा वफ़ा[1] तो दूर कि वादा न हो सका
मेरा भरम[2] भी उनको गवारा[3] न हो सका

बस तेरे आस्ताने[4] पे सर रख के रो दिये
कुछ हम से आज इसके अलावा न हो सका

इक उम्र उनसे अहदे-वफ़ा[5] हम किया किये
इक उम्र उनको हम पे भरोसा न हो सका

साये की शर्त्त थी कि रहे रौशनी भी साथ
तन्हा तो अपना साया भी अपना न हो सका

हर-दिल अज़ीज़ शख़्स[6] की क़िस्मत तो देखिये
ऐसा हुआ वो सबका, किसी का न हो सका

मैं ने नसीहतें तो उसे कीं, मुझे मगर
उससे नज़र मिलाने का यारा[7] न हो सका

वो थी ग़ज़ल कभी जो पुरानी नहीं पड़ी
शाइर था मैं भी उम्र से बूढ़ा न हो सका

1. वादा पूरा करना 2. भ्रम 3. सहन 4. चौखट का पत्थर
5. प्रेम की प्रतिज्ञा 6. सभी को प्रिय व्यक्ति 7. हिम्मत

उम्मीद की तू पहली किरन आख़िरी भी तू
हाफ़िज़[1] ग़रीब का कोई तुझसा न हो सका

ख़्वाजा 'ख़याल' जान से अब जायेगा अगर
तुझसे भी उसके दुःख का मदावा[2] न हो सका

1. रक्षक 2. इलाज.

ग़ज़ल

मेरी उलझन से मेरे साथ उलझने वाला
कोई तो होता मेरी बात समझने वाला

एक ख़ुरशीद-सा[1] आग़ोशे-सहर[2] से उभरा
रात-भर चांद की मानिन्द चमकने वाला

आईने तेरी तो सखियाँ हैं वो आँखें, ये बता
किसके ख़्वाब उनमें संजोये है संवरने वाला

इक बुझी प्यास न हो जाऊँ कहीं मैं उसकी
मुझे पा जाये अगर मुझको तरसने वाला

अपना दिल भी वो कसौटी पे कभी तो रक्खे
मेरे एहसास का मफ़हूम[3] परखने वाला

नाम लिख जाते हैं खंडरात की दीवार पे सब
लौट कर आता कहाँ है कोई जाने वाला

अब के आये जो कोई अब्र[4] तो बस ऐसा 'ख़याल'
मेरी आँखों की तरह रोज़ बरसने वाला

1. सूर्य जैसा 2. सुबह के आलिंगन 3. अर्थ 4. बादल.

ग़ज़ल

मेरा अन्दाज़ा ग़लत हो तो बता दे मुझको
तुझ पे इल्ज़ाम सिवा हो तो सज़ा दे मुझको

उसने आँखों में जगह दी भी तो आँसू की तरह
शायद इक हल्की-सी जुंबिश[1] भी गिरा दे मुझको

मैं उजाला हूँ तो तन्वीर[2] मुझे अपनी बना
और अंधेरा हूँ तो ऐ शम्अ मिटा दे मुझको

तेरी नज़रों में मोहब्बत भी है इक खेल, तो आ
मैं करूँ तुझपे भरोसा तू दग़ा दे मुझको

अपनी तक़दीर से टकराऊँ, बदल डालूँ इसे
इतनी तौफ़ीक़[3] कभी मेरे ख़ुदा दे मुझको

देखते ही वो मेरा हाल समझ जाये, ख़ुदा
ग़मे-जानाँ[4] की वो तस्वीर बना दे मुझको

ख़्वाब तो ख़्वाब हैं फिर इनकी हक़ीक़त क्या है
तू तो जब चाहे उसी वक़्त जगा दे मुझको

1. कंपन 2. चमक 3. सामर्थ्य 4. प्रेमिका का दु:ख

दिल संभाले से मेरे आज संभलता ही नहीं
तू ही यादों के दरीचे[1] से सदा दे मुझको

साफगोई[2] का ये अन्दाज़ न भूलेगा कभी
मैं तुझे भूल चुका, तू भी भुला दे मुझको

ख़ुद से बढ़ कर भी मुझे उसपे तरस आता है
उसके दामन में नहीं कुछ भी वो क्या दे मुझको

तेरे एहसान तो पहले ही बहुत हैं मुझ पर
तू मोहब्बत न मोहब्बत का सिला[3] दे मुझको

कितनी देर और रुआँसा मुझे रक्खेगा 'ख़याल'
अब रूलाना है तो फिर साफ़ रुला दे मुझको

1. खिड़की 2. दो टूक बात करना 3. प्रतिदान.

ग़ज़ल

जुनूने-शौक़[1] के आलम में आख़िर गुमरही[2] कैसी
अगर मंज़िल की सुध बाक़ी रही फिर बेख़ुदी कैसी

शजर[3] ने सर धुना है रात भर ठंढी हवाओं में
ख़बर दे कर गयी थी शाम जाने चांदनी कैसी

छना करता था जिनसे नूर[4] कल तक आशनाई[5] का
उतर आयी उन्हीं आँखों में देखो बेरूख़ी कैसी

सभी कुछ तो कहा हमने जो कहने पर कभी आये
दिलों में फाँस-सी अटकी है फिर ये अनकही कैसी

लगी है आग सीने में तो अपना काम कर जाये
जला कर राख कर दे दिल, नहीं तो आग ही कैसी

अगर पत्थर न हो पाये तो दिल शीशा भी मत रखिए
न जाने सख़्त हो आगे ये राहे-ज़िन्दगी[6] कैसी

फ़लक[7] तारों भरा फैला हो जैसे एक नीचे भी
बलन्दी[8] से नज़र आयी ज़मीं[9] की रौशनी, कैसी

1. प्रेम का उन्माद 2. राह भटका हुआ होने की स्थिति 3. पेड़ 4. प्रकाश 5. परिचय, प्रेम 6. जीवन की राह 7. आकाश 8. ऊचाँई 9. ज़मीन

कहीं लौटे हैं बीते दिन भी रो-रो कर बुलाने से
गुज़िश्ता[1] वक़्त, बहते पानियों की वापसी कैसी

हम उनकी राह देखेंगे भला कैसे अंधेरे में
शबे-हिज्राँ[2], उदासी हो मगर ये तीरगी[3] कैसी

न मैं तुझको समझ पाया, न समझा ही तुझे पाया
तो फिर किस काम की तालीम[4] मेरी आगही[5] कैसी

अगर महदूद[6] रह जाये फ़क़त[7] शफ़्फ़ाफ़[8] कपड़ों तक
भले लोगो, ज़रा सोचो तो ऐसी सादगी कैसी

'ख़याल' अब ग़ौर कीजे तो क़रीबे-सुब्ह हैं सबसे[9]
मगर तारीक़[10] हैं शब[11] की ये घड़ियाँ आख़िरी कैसी

1. बीता हुआ 2. विरह ही रात 3. अंधेरा 4. शिक्षा 5. ज्ञान 6. सीमित
7. केवल 8. उज्ज्वल सफेद 9. ध्यान से देखें तो सुबह के सबसे पास हैं
10. अंधेरी 11. रात

ग़ज़ल

काफ़र-निगाह[1] मुझपे कहीं मेहरबाँ न हो
कातिल उसे कहा है, मगर जाने-जाँ न हो

मेरी निशानियों को गले से न यूँ लगा
जैसे कि अब जहान में मेरा निशाँ न हो

तादेर[2] गूंजती रहे गुम्बद में ख़ल्क़[3] के
दे ऐसी इक सदा जो कभी बेज़ुबाँ न हो

तफ़सील[4] मेरी ज़ात[5] की उनको कहाँ मिलीं
मेरे मुख़ालिफ़ों[6] में कोई राज़दाँ[7] न हो

फूलों की डालियों से, चमन की बहार से
ये रब्ते-बाहमी[8] कहीं ख़ौफ़े-ख़िज़ाँ[9] न हो

बेचारगी भी होगी तेरी जग-हँसाई भी
ऐ मेरे राज़े-दिल तू किसी पर अयाँ[10] न हो

शायद हमारी बात लगी है तुझे बुरी
अपना 'ख़याल' जान इसे, बदगुमाँ[11] न हो

1. प्रेमिका जैसी आँखों वाली 2. देर तक 3. जनता रूपी गुम्वज
4. विवरण 5. निजी अस्तित्व 6. विरोधियों 7. विश्वासपात्र
8. आपसी प्रेम 9. पतझड़ के मौसम का डर 10. प्रकट
11. गलतफहमी का शिकार.

ग़ज़ल

मैं ख़ुद ही अपने पाँव की ज़ंजीर हो गया
अपने किये की आप ही ताज़ीर[1] हो गया

आँसू हमारी आँख का इक्सीर[2] हो गया
काग़ज़ पे गिर गया तो वो तहरीर[3] हो गया

क़ुदरत का शाहकार था वो पेड़ का तना
कट कर भी इक मकान में शहतीर[4] हो गया

बेसूदो-बेअमल[5] हूँ मिटा दीजिए मुझे
दीवारो-दर[6] पे तिफ़्ल की[7] तहरीर हो गया

बनता रहा जो काम तो तदबीर कह दिया
बन कर बिगड़ गया है, तो तक़दीर हो गया

कुछ लोग अब करेंगे नयी छत की फिर तलाश
लो, इक मकान और भी तामीर[8] हो गया

अबरू[9] कमान, और नज़र तीर हो गयी
क़ातिल तो गोया आप ही शमशीर[9] हो गया

1. सज़ा 2. अचूक 3. लिखावट 4. छत की धरन 5. बेफायदा और अनुपयोगी 6. दीवार और दरवाज़ा 7. बच्चे की 8. निर्माण 9. भवें 10. तलवार.

क्या क्या न मेरी आँखों को उम्मीद थी मगर
ये आइना भी मेरी ही तस्वीर हो गया

कुछ शेर अच्छे क्या हुए, मैं सोचने लगा
गोया[1] 'ख़याल' ही न हुआ, मीर[2] हो गया

1. जैसे 2. उर्दू के एक महान कवि.

کیا کیا نہ میری آنکھوں کو اُمید تھی مگر
یہ آئینہ بھی میری ہی تصویر ہو گیا

کچھ شعر اچھے کیا ہوئے میں سوچنے لگا
گویا خیالؔ ہی نہ ہوا میرؔ ہو گیا

غزل

میں خود ہی اپنے پاؤں کی زنجیر ہوگیا
اپنے کیے کی آپ ہی تعزیر ہوگیا

آنسو ہماری آنکھ کا اکسیر ہوگیا
کاغذ پہ گر گیا تو وہ تحریر ہوگیا

قدرت کا شاہکار تھا وہ پیڑ کا تنا
کٹ کر بھی اک مکان میں شہتیر ہوگیا

بے سود و بے عمل ہوں مٹا دیجیے مجھے
دیوار و در پہ طفل کی تحریر ہوگیا

بنتا رہا جو کام تو تدبیر کہہ دیا
بن کر بگڑ گیا ہے تو تقدیر ہوگیا

کچھ لوگ اب کرینگے نئی چھت کی پھر تلاش
لو، اِک مکان اور بھی تعمیر ہوگیا

ابرو کمان اور نظر تیر ہوگئی!
قاتل تو گویا آپ ہی شمشیر ہوگیا

غزل

کافر نگاہ مجھ پہ کہیں مہرباں نہ ہو
قاتل اُسے کہا ہے مگر جانِ جاں نہ ہو

میری نشانیوں کو گلے سے نہ یوں لگا
جیسے کہ اب جہان میں میرا نشاں نہ ہو

تا دیر گونجتی رہے گنبد میں خلق کے
دے ایسی اِک صدا جو کبھی بے زباں نہ ہو

تفصیل میری ذات کی ان کو کہاں ملی
میرے مخالفوں میں کوئی راز داں نہ ہو

پھولوں کی ڈالیوں سے چمن کی بہار سے
یہ ربط باہمی کہیں خوفِ خزاں نہ ہو

بے چارگی بھی ہو گی تری جگ ہنسائی بھی
اے میرے رازِ دل تو کسی پر عیاں نہ ہو

شاید ہماری بات لگی ہے تجھے بُری
اپنا خیال جان اسے، بد گماں نہ ہو

کہیں لوٹے ہیں بیتے دن بھی رو رو کر بلانے سے
گذشتہ وقت، بہتے پانیوں کی واپسی کیسی

اگر پتھر نہ ہو پائے تو دل شیشہ بھی مت رکھیئے
نہ جانے سخت ہو آگے یہ راہِ زندگی کیسی

نہ میں تجھ کو سمجھ پایا نہ سمجھا ہی تجھے پایا
تو پھر کس کام کی تعلیم میری آگہی کیسی

اگر محدود رہ جائے فقط شفاف کپڑوں تک
بھلے لوگو! ذرا سوچو تو ایسی سادگی کیسی

خیالؔ اب غور کیجے تو قریبِ صبح ہیں سب سے
مگر تاریک ہیں شب کی یہ گھڑیاں آخری کیسی

غزل

جنونِ شوق کے عالم میں آخر گمرہی کیسی
اگر منزل کی سُدھ باقی رہی پھر بیخودی کیسی

چھنا کرتا تھا جن سے نور کل تک آشنائی کا
اتر آئی انہیں آنکھوں میں دیکھو بے رُخی کیسی

شجر نے سر دھنا ہے رات بھر ٹھنڈی ہواؤں میں
خبر دے کر گئی تھی شام جانے چاندنی کیسی

لگی ہے آگ سینے میں تو اپنا کام کر جائے
جلا کر راکھ کر دے دل، نہیں تو آگ ہی کیسی

کبھی کچھ تو کہا ہم نے جو کہنے پر کبھی آئے
دلوں میں پھانس سی اٹکی ہے پھر یہ ان کہی کیسی

ہم ان کی راہ دیکھیں گے بھلا کیسے اندھیرے میں
شبِ ہجراں اداسی ہو مگر یہ تیرگی کیسی

فلک تاروں بھرا پھیلا ہو جیسے ایک نیچے بھی
بلندی سے نظر آئی زمیں کی روشنی کیسی

صاف گوئی کا یہ انداز نہ بھولے گا کبھی
میں تجھے بھول چکا تو بھی بھلا دے مجھ کو

دیکھتے ہی وہ مرا حال سمجھ جائے خدا
غم جاناں کی وہ تصویر بنا دے مجھ کو

خواب تو خواب ہیں پھر ان کی حقیقت کیا ہے
تو تو جب چاہے اسی وقت جگا دے مجھ کو

تیرے احسان تو پہلے ہی بہت ہیں مجھ پر
تو محبت، نہ محبت کا صلہ دے مجھ کو

کتنی دیر اور روہانسہ مجھے رکھے گا خیالؔ
اب رُلانا ہے تو پھر صاف رُلا دے مجھ کو

غزل

میرا اندازہ غلط ہو تو بتا دے مجھ کو
تجھ پہ الزام سوا ہو تو سزا دے مجھ کو

اس نے آنکھوں میں جگہ دی بھی تو آنسو کی طرح
شاید اک ہلکی سی جنبش بھی گرا دے مجھ کو

میں اُجالا ہوں تو تنویر مجھے اپنی بنا
اور اندھیرا ہوں تو اے شمع مٹا دے مجھ کو

تیری نظروں میں محبت بھی ہے اک کھیل تو آ
میں کروں تجھ پہ بھروسہ تو دغا دے مجھ کو

اپنی تقدیر سے ٹکراؤں، بدل ڈالوں اِسے
اتنی توفیق کبھی میرے خدا دے مجھ کو

دل سنبھالے سے مرے آج سنبھلتا ہی نہیں
تو ہی یادوں کے دریچے سے صدا دے مجھ کو

خود سے بڑھ کر بھی مجھے اُس پہ ترس آتا ہے
اُس کے دامن میں نہیں کچھ بھی وہ کیا دے مجھ کو

غزل

میری الجھن سے مرے ساتھ الجھنے والا
کوئی تو ہوتا مری بات، سمجھنے والا

ایک خورشید سا آغوشِ سحر سے ابھرا
رات بھر چاند کی مانند چمکنے والا

آئینے تیری تو سکھیاں ہیں وہ آنکھیں، یہ بتا
کس کے خواب ان میں سنجوئے ہے سنورنے والا

اک بجھی پیاس نہ ہو جاؤں کہیں میں اُس کی
مجھ پا جائے اگر مجھ کو ترسنے والا

اپنا دل بھی وہ کسوٹی پہ کبھی تو رکھے
میرے احساس کا مفہوم پرکھنے والا

نام لکھ جاتے ہیں کھنڈرات کی دیوار پہ سب
لوٹ کر آتا کہاں ہے کوئی جانے والا

اب کے آئے جو کوئی ابر تو بس ایسا خیال
میری آنکھوں کی طرح روز برسنے والا

امید کی تُو پہلی کرن آخری بھی تُو
حافظِ غریب کا کوئی تجھ سا نہ ہو سکا

خواجہ خیالؔ جان سے اب جائے گا اگر
تجھ سے بھی اُس کے دکھ کا مداوا نہ ہو سکا

غزل

وعدہ وفا تو دور کہ وعدہ نہ ہو سکا
میرا بھرم بھی ان کو گوارہ نہ ہو سکا

بس تیرے آستانے پہ سر رکھ کے رو دیئے
کچھ ہم سے آج اِس کے علاوہ نہ ہو سکا

سائے کی شرط تھی کہ رہے روشنی بھی ساتھ
تنہا تو اپنا سایہ بھی اپنا نہ ہو سکا

ہر دلعزیز شخص کی قسمت تو دیکھئے
ایسا ہوا وہ سب کا، کسی کا نہ ہو سکا

اک عمر اُن سے عہدِ وفا ہم کیا کیے
اک عمر اُن کو ہم پہ بھروسہ نہ ہو سکا

میں نے نصیحتیں تو اُسے کیں، مجھے مگر
اُس سے نظر ملانے کا یارا نہ ہو سکا

وہ تھی غزل کبھی جو پرانی نہیں پڑی
شاعر تھا میں بھی عمر سے بوڑھا نہ ہو سکا

آپ کی طرح نکل جائے بچا کر آنکھیں
مجھ سے دھوکہ نہ مری جان بھی کر جائے کہیں

ابرِ باراں کی طرح آج برس جائے خیال
ان کی آنکھوں سے جو مِل دیدۂ تر جائے کہیں

غزل

زخمِ دل دے کے وہی آپ نہ بھر جاتے کہیں
حادثہ یہ بھی مجھی پر نہ گذر جائے کہیں

روز کھاتا ہے قسم پیار میں مر جانے کی
ہائے، دیوانہ ترا سچ ہی نہ مر جائے کہیں

ایک سایہ بھی درختوں کا نہ راہوں میں بچا
کہ جو تھک جائے مسافر تو ٹھہر جائے کہیں

آج اس دور کے حالات پہ رونے کے لیے
آنکھ آنسو کی جگہ خوں سے نہ بھر جائے کہیں

معرفت ہو جو رقیبوں کے، بہت ممکن ہے
تو کہیں اور رہے اور خبر جائے کہیں

اپنا دل اپنے گواہوں میں نہ شامل کیجیے
عین موقع پہ نہ کمبخت مکر جائے کہیں

موت دریا ہے تو یہ زیست سفر کشتی کا
جانے کب کون کسی گھاٹ اتر جائے کہیں

غزل

صرف وعدہ نہ کرے وعدہ نبھائے بھی کوئی
جان کہتا ہے تو پھر جان سا چاہے بھی کوئی

پیار کرنا ہے تو بس پیار کیے جا اس کو
کیا ضروری ہے اُسے جا کے بتائے بھی کوئی

نہ سہی خط نہ عبارت اک اشارہ ہی سہی
میں تو آجاؤں مگر مجھ کو بلائے بھی کوئی

پیار پائے گا ترا کوئی نصیبوں والا
پر، یہ کیسے ہو تجھے اور نہ چاہے بھی کوئی

اپنا آباد نگر خود ہی اجاڑے کیسے
کس طرح دل سے تری یاد بھلائے بھی کوئی

کیسے دن رات سراہے تو سراہے بھی کوئی
دم ہی گھٹ جائے گا اس طرح جو چاہے بھی کوئی

کب سزاؤں سے بھی ڈرتا ہے خیالؔ آپ مگر
دیکھ تو لیں کہ بھلا اس کی خطا ہے بھی کوئی

غزل

منزل بھی دور وقت بھی کم آئیے چلیں
تھوڑا سا اور تیز قدم آئیے چلیں

دنیا کے بھول جائیں ستم آئیے چلیں
ساغر میں کردیں غرق یہ غم آئیے چلیں

ذرے بھی گردِ راہ کے منزل سے کم نہیں
سانسوں کا قافلہ ہے صنم آئیے چلیں

راہِ وفا میں جھوٹی تو اول نہ کھاتے ہم
کھالی تو پھر نبھا ہیں قسم آئیے چلیں

چارہ نہیں ہے کوئی یہ جائے گا جاں کیساتھ
ہے وہم لاعلاج الم آئیے چلیں

ہم دیں تو کس یقین سے اب دیں اُسے صدا
پتھر سا ہوگیا ہے صنم آئیے چلیں

آرام کی خیال کوئی انتہا بھی ہے
لے جو لیا ہو آپ نے دم آئیے چلیں

اگرچہ ساتھ دینے کی قسم اس نے بھی کھائی تھی
مری تنہائی کہتی ہے تجھے دھوکا ہوا ہوگا

چلو پھر ڈھونڈ کر دیکھیں اندھیروں کی فصیلوں میں
یہاں سے بھی نکلنے کا کوئی تو راستہ ہوگا

خیالؔ اپنی محبت میں کمی آنے نہ دینا تم
بھلے ہی ہو اگر ان کی طرف سے فاصلہ ہوگا

غزل

دعائیں مجھ سے ملنے کی برابر مانگتا ہوگا
جہاں بھی ہو مری ہی یاد میں وہ مبتلا ہوگا

بتا بھی تو نہیں پایا اسے مجبوریاں اپنی
نہ جانے وہ مرے بارے میں کیا کچھ سوچتا ہوگا

اب اُس کی بے نیازی کا گلہ بھی کیا کریں شاید
اسے جو کچھ دیا ہم نے یہی اس کا صلہ ہوگا

کسی کا ذکر ہوتے ہی نہ وہ اتنا خفا ہوتا
یقیناً دل ہی دل میں وہ بھی مجھ کو چاہتا ہوگا

پہاڑوں کی ملائم دھوپ اتری ہے ڈھلانوں سے
کنارے جھیل کے عکسوں کا مجمع لگ رہا ہوگا

نہ جانے کیوں چھلک اٹھیں ہیں آنکھیں آج پھر ایسے
مری خوشیوں کا پیمانہ ہی شاید بھر گیا ہوگا

تمہاری بیوفائی کی مناسب یہ سزا ہوگی
تصور میرا ہوگا پاس کوئی دوسرا ہوگا[1]

---

[1] یہ مصرعہ طرح جناب راشد ٹونکی نے دیا۔

شبِ ہجراں میں یہ غنیمت ہے
تم بہت یاد آ رہے ہو مجھے[1]

نذرِ دوست

اپنے دل سے بھی دشمنی کرلوں
اور دشمن سے دوستی کرلوں

تو ذرا پیار کر کے دیکھ مجھے
جو بھی تو چاہے میں وہی کرلوں

تو نہ چاہے تو کیسے سمجھاؤں
میں جتن چاہے جتنے بھی کرلوں

پھر نہ رونا بھی میرے مرنے کو
تجھ سے چاہا تھا دوستی کرلوں

رات مجھ کو بھی یہ خیال آیا
تجھ سے وعدہ یہ آخری کرلوں

کام آئے جو میری جاں تیرے
دوست اُس دن میں خودکشی کرلوں

---

[1] یہ مصرعہ طرح جناب عابد عاقل ٹونکی کا دیا ہوا ہے۔

غزل

تم بھی گویا نبھا رہے ہو مجھے
رسمِ دنیا سکھا رہے ہو مجھے

کام آئے گا عمر بھر میرے
تم جو غم دے کے جا رہے ہو مجھے

طے نہ ہو پایا جو کبھی مجھ سے
تم وہ اک فاصلہ رہے ہو مجھے

اپنی صورت سے خوب واقف ہوں
آئینہ کیا دکھا رہے ہو مجھے

حشر کے دن سے کیا نہیں ڈرتے
اس قدر کیوں ستا رہے ہو مجھے

آج تک جیسے مجھ کو جانا نہیں
تم تو یوں آزما رہے ہو مجھے

اپنا دشمن ہوں دوست ہیں خود ہی
کس کی خاطر بچا رہے ہو مجھے

غزل

وہ کہ آئے بھی یہاں اور گلے ملنے لگے
پھول کی طرح بھلا دل بھی کہیں کھلنے لگے

تیری رسوائی نہ ہو جائے کہیں میرے صنم
تو جو ویرانے میں چپ چاپ مجھے ملنے لگے

زخم کا نام نہ دو پھول کہو اب ان کو
موسمِ گل میں بھی ہر سمت یہی کھلنے لگے

ان کو تو وقت کا مرہم بھی نہیں ہے حاصل
کیا عجب ہے جو نئے زخم مرے چھلنے لگے

ہو گئی خشک زباں حوصلے کافور ہوئے
ان سے ہوتے ہی مخاطب مرے لب سلنے لگے

غزل

ڈوب جانا ہے رواں اب تو ٹھہرتا کیوں ہے
مجھ پہ آیا ہے تجھے پیار تو ڈرتا کیوں ہے

پیار کو پیار تو کیا اس نے تسلّی بھی نہ دی
تُو پھر اس جانِ کے دشمن ہی پہ مرتا کیوں ہے

ایک قطرہ بھی بہانے کی نہیں تاب تو پھر
میری آنکھوں میں عبث خون اترتا کیوں ہے

آج کل اتنی نوازش ہے کرم ہے ان کا
سوچتا ہوں کہ مرا وقت گذرتا کیوں ہے

وہ خفا ہے تو رہے اتنا بتا دے مجھ کو
میرے آنے کی خبر پا کے سنورتا کیوں ہے

یوں اسیری سے ہوں مانوس کہ اب جانا کہاں
پھر بھی صیاد مرے پنکھ کترتا کیوں ہے

اور بد رنگ ہوئی جاتی ہے کچھ صورتِ حال
رنگِ اُمّید کا شیرازہ بکھرتا کیوں ہے

کے دن دنیا کی آنکھوں میں
اور خیالؔ کھٹکتا ہے یہ

غزل

جان کے دل کو کھونا اچھا
اُس پر جان کو رونا اچھا

ایماں کھو کر پانے والو
یوں پانے سے کھونا اچھا

اِک مجبور ہنسی ہنسنے سے
راہِ وفا میں رونا اچھا

اچھا اس کو چاہو اگر تم
اس کے لیے بھی ہونا اچھا

اپنا دلِ بیمار خیالؔ اب
مشکل ہی ہے ہونا اچھا

غزل

کھلی آنکھ اور سپنا ہے یہ
میرا نظریہ اپنا ہے یہ

میں ہوں اس تنہائی کا مالک
اور مقدر اپنا ہے یہ

دکھ کی رات کا ایک سہارا
تاروں کا جو تکنا ہے یہ

کس نے پڑھی ہیں کل کی لکیریں
آج تو لیکن اپنا ہے یہ

دل پر بس کس کا رہتا ہے
ہاں بیکار تڑپنا ہے یہ

یہی تو آنسو تھامے ہوئے ہے
ویسے پلک جھپکنا ہے یہ

آخر اس میں پانی بندھے گا
جس صفحے پر چھپنا ہے یہ

غزل

اے دلِ مضطر شبِ غم کی سحر ہو جائے گی[1]
روشنی بھی، میری جاں، تھوڑا ٹھہر ہو جائے گی

ٹوٹ کر گر جائے گا پھر یہ اندھیروں کا نظام
ان کے آتے ہی چراغاں رہ گزر ہو جائے گی

وہ بکھیرے زلف اپنی ساتھ میرے ہو لیے
زندگی اب خوشبوؤں کا اک سفر ہو جائے گی

یہ سراپا حسن لے کر پھریئے مت اس شہر میں
مانیئے میرا کہا ورنہ نظر ہو جائے گی

اس قدر بیباک نظروں سے جو دیکھو گے مجھے
دوستی کی دشمنوں کو بھی خبر ہو جائے گی

دل میں پہلے دے چکا ہوں، وہ بھی کم ہے آپکو
جان بچی ہے سونچھا ور آپ پر ہو جائے گی

ان کے بعد اب اپنی آنکھیں بھی گرا ہی دیں ہمیں
ان کے ہاتھوں جو رہی پوری کسر ہو جائے گی

---

[1] یہ مصرعۂ طرح جناب عابد عاقل ٹونکی نے دیا۔

تو مری زندگی کا حاصل ہے
میں بھی کچھ ہوں ترا بتا لیکن

آپ کہہ لیجئے شراب کو زہر
ہم کہیں گے اِسے دوا لیکن

دل کسی کام کا نہ ہوگا خیال
آپ کے نام کر دیا لیکن

غزل

دے رہے ہو مجھے سزا لیکن
جانتے ہو کہ بے خطا لیکن

اس سے نزدیک اور کیا آتے
رہ گیا کتنا فاصلہ لیکن

حال پر میرے چھوڑ دیتے مجھے
ان سے یہ بھی نہ ہو سکا لیکن

آنکھ رسوائیوں سے ڈرتی رہی
دل مرا کھل کے رو لیا لیکن

وہ مرے ساتھ ساتھ چلتا تھا
میں اُسے ڈھونڈتا رہا لیکن

ہیں دُعائیں اثر طلب اَب بھی
آ گئی کام بد دُعا لیکن

ساتھ تم تھے تو ہو گیا آساں
گو سفر تھا بہت کڑا لیکن

غزل

اشک آنکھوں میں بھرے یاس لیے بیٹھا ہوں
اپنی تنہائی کا احساس لیے بیٹھا ہوں

تو سمندر کی طرح ذہن میں لہراتا ہے
میں کنارے پہ تری پیاس لیے بیٹھا ہوں

تیری خوشبو سے معطّر ہے شبِ تنہائی
ایسا لگتا ہے تجھے پاس لیے بیٹھا ہوں

نا اُمیدی بھی مکمل نہیں ہوتی میری
لوٹ آنے کی ترے آس لیے بیٹھا ہوں

غزل

کل کی سی جو بات لگے ہے آج پرانی ہو گئی پل میں
ابھی ابھی تو شروع ہوئی تھی ختم کہانی ہو گئی پل میں

دل توڑا پہلے تو اس نے اس پر دل کو روگ لگا
کیسا تھا چارہ گر اپنا خاک جوانی ہو گئی پل میں

پچھلے جنم کا ناطہ تھا یا میرا مقدر جاگا تھا
میں نے کہا تو میری ہو جا میری دِوانی ہو گئی پل میں

تیری چاہت گویا من میں اک جذبات کی آندھی تھی
دِل ٹوٹا جب وہی پگھل کر آنکھ کا پانی ہو گئی پل میں

غزل

یہ محبت کا اثر ہے مرا سادہ چہرا
ہو گیا ہے جو تری آنکھ کا تارہ چہرا

میری فریاد سُنی حُسن کے ہنسے اور کہا
کبھی دیکھا بھی ہے آئینے میں اپنا چہرا

تیری چاہت کے اجالوں کی چمک تھا کل تک
ہائے یہ گردشِ ایام کا مارا چہرا

کبھی آنکھیں، کبھی عارض تو کبھی ہونٹ فقط
کاش آئے تو کبھی یاد وہ پورا چہرا

آج صحرائے تصور پہ اچانک ہی خیال
ماہِ کامل سا چمک اٹھا ہے اُن کا چہرا

غزل

آجائیے قریب کبھی بے حجاب بھی
اب دیکھ لینے دیجئے اپنا شباب بھی

چاہے لکھا ہو کچھ بھی مگر ان کا خط تو ہے
کس کو یقین تھا کہ وہ دیں گے جواب بھی

اندھوں سے کچھ نہ پوچھیے کیا کچھ لکھا پڑھا
بینائی جب نہیں تو کرے کیا کتاب بھی

چاہا تو یہ نہیں تھا مگر ہو یہی گیا
آنکھیں کھلی ہیں میری تو ٹوٹے ہیں خواب بھی

بدنام ہو رہے ہیں، مگر کوئی غم نہیں
ہم تو تمھارے واسطے ہونگے خراب بھی

ہر دوست ساتھ چھوڑ کے آخر چلا گیا
راس آسکی نہ مجھ کو تو ظالم شراب بھی

اپنے سوا تو ان کو کسی کا نہیں خیال
کیوں مانگتے ہیں مجھ سے وہ میرا حساب بھی

نہ مٹا پایا ترا پیار کبھی دل سے خیال
اور نہ حالت ہی تجھے اپنی بتا پایا ہے

سر اونچا کر کے چلتے ہیں، یہ ٹھوکر جان کے کھائی ہے
غیرت کی قیمت دینی ہے یہ ہم نے مان کے کھائی ہے
تو لاکھ سکندر خود کو سمجھ بازو پہ اپنے ناز بھی کر
یہ چوٹ تو لیکن دانستہ ہاں ہم نے ٹھان کے کھائی ہے

غزل

تیرے لہجے میں جو اقرارِ وفا پایا ہے
چین تب جا کے کہیں دل نے ذرا پایا ہے

حوصلہ میرا ستم گر نے بجا پایا ہے
آج پھر دل نے محبت کا صلہ پایا ہے

بند آنکھوں سے کبھی آج بھی جب یاد کیا
ایک دلہن سی تمہیں میں نے سدا پایا ہے

یوں تبسم نے مٹائے ہیں وہ ماتھے کے شکن
آج کچھ ہم نے تمہیں تم سے جدا پایا ہے

رات گلشن سا کوئی خواب میں دیکھا میں نے
صبح دم ہونٹوں میں اِک پھول دبا پایا ہے

ڈوب جانے کے سوا اب کوئی چارہ ہی نہیں
تیری آنکھوں نے تلاطم کا نشہ پایا ہے

کھیل قسمت کا ہے سب، بزم سجی ہے کوئی
اور کوئی یاد کی بس شمع جلا پایا ہے

دل کی بربادی کے آثار نظر آتے ہیں
ایسی پرکیف فضا اور بے قراری ہے

دُکھ ہوا ہوگا تمھیں بھی تو اِسے دیکھ کے اب
میری آنکھوں میں جو یہ چپ سی سمجھداری ہے

جو کسی غیر کے مُنہ سے نہ لگی مجھ کو بُری
تیرے ہونٹوں سے وہی بات زخم کاری ہے

مانگ کر پیار تو کیا بھیک بھی ملے نہ جہاں
دِل اُسی شہرِ تمنّا میں اِک بھکاری ہے

ماں یہ بازی تو ہر اک رنگ میں ہاریگی خیالؔ
بھائیوں میں ہی اگر جنگِ فنا جاری ہے

غزل

گرچہ یہ شام بھی مجھ پر تو بہت بھاری ہے
اس سے بڑھ کر بھی کہیں خوفِ سحر طاری ہے

ہر نفس سوچتا ہوں اب کے مری باری ہے
یہ سفر ہے کہ یہ تیاری ہی تیاری ہے

رو کے کاٹینگے تو ہو جائے گی اُلفت رُسوا
ہنس کے جھیلیں کہ سزا دی ہوئی تمہاری ہے

اب تو مشکل ہی سے شاید اسے پہچان سکو
برسوں پہلے کی یہ تصویر یوں ہماری ہے

پھانسی لگنی ہے جسے کل ہی اسے پوچھ کے دیکھ
زندگی کتنی حسیں، جان کتنی پیاری ہے

بزم تو بزم مرا گھر بھی اندھیرا نہ ہوا
زندگی موت سے اس طرح کبھی ہاری ہے

اب آنسوؤں سے چکا قرض یہ شبِ غم کا
اتنا ہنس ہنس کے شبِ وصل جو گذاری ہے

رات گئے / ۱۰۹

کیا کہوں کتنی بار ٹوٹا دل
ایسی باتوں کا اب حساب کہاں

یہ بھی وعدہ تمہارا جھوٹا ہے
تم پڑھو گے مری کتاب کہاں

یونہی قسمت کو لوگ روتے ہیں
ہم سے ہوں گے کوئی خراب کہاں

اب نصیحت خیاؔل کرنے لگے
انہیں ملتی ہے اب شراب کہاں

اتنے غم یہ ذرا سی جان مری
آندھیوں میں بچے حباب کہاں

وہ محبت بھی کم ہی کرتا ہے
غم بھی دے گا تو بے حساب کہاں

دوریاں قربتوں میں لپٹی ہیں
میری چاہت میں اضطراب کہاں

کس تصور میں سوچ میں غم میں
ڈوبا جاتا ہے ماہتاب کہاں

پھر شجر پر بہار آ تو گئی
اُس بلا کا مگر شباب کہاں

نیک بندے خدا کے ہوں گے مگر
اِس زمانے میں کامیاب کہاں

میرا ساقی ہی بن گیا ناصح
اب ملے گی مجھے شراب کہاں

تم زمانے کی بدنظر سے ڈرو
پھرتے رہتے ہو بے نقاب کہاں

غزل

کسِ دیدارِ آفتاب کہاں
میری نظروں میں اتنی تاب کہاں

اتنے آسان سے سوال کا بھی
کوئی آسان سا جواب کہاں

نیند تنہائیوں میں ٹوٹی ہے
محفلوں کے گئے وہ خواب کہاں

جتنی پی، پیاس اتنی اور بڑھی
زد میں آیا مری سراب کہاں

کب تلک روؤں جانے والے کو
حوصلہ غم کا بے حساب کہاں

تلخیاں حیف اپنی مٹی میں
اب کھلیں گے مرے گلاب کہاں

بے کسوں کے لہو کا دھبہ ہے
دھو سکے گا کوئی ثواب کہاں

غزل

تو جب بھی یاد آئے تو ہو جائے اک غزل
کوئی جو دل دکھائے تو ہو جائے اک غزل

اپنے لگیں پرائے تو ہو جائے اک غزل
دل پھر فریب کھائے تو ہو جائے اک غزل

ہے گم طلسمِ شب میں جو بیتی رتوں کی دھن
ہونٹوں پہ لوٹ آئے تو ہو جائے اک غزل

برسات کے دنوں میں ترے گیسوؤں کی یاد
دل پر گھٹا سی چھائے تو ہو جائے اک غزل

میری خطا ہو پھر بھی اگر روٹھنے کے بعد
تو ہی مجھے منائے تو ہو جائے اک غزل

ماضی کے پتھروں پہ جو یادوں کی تیز دھوپ
پاؤں مرے جلائے تو ہو جائے اک غزل

تیرا خیال آ تو رہا ہے مجھے مگر
اے کاش اور آئے تو ہو جائے اک غزل

بیوفا پہلے سے تھے عمر بھی اب ہونے لگی
یاد رکھتے بھی نہیں یاد بھی کم رہتا ہے

بعد مدت ذرا بہتر ہے خیال آپ کا حال
درد رہتا ہے مگر پہلے سے کم رہتا ہے

غزل

جذبۂ دل ہی مری آنکھوں میں کم رہتا ہے
اس پہ پھر ان کو دکھاوے کا بھرم رہتا ہے

ان کو آتا ہی نہیں میری محبت کا یقیں
میری آنکھوں میں اسی بات کا غم رہتا ہے

جن دنوں ہوتی ہے کچھ اور زیادہ کی امید
آپ کا ہم پہ کرم اور بھی کم رہتا ہے

کفر کی غیر کو تو دیتا ہے تہمت لیکن
خود ترے دل میں شب و روز صنم رہتا ہے

آپ چاہیں تو شبِ غم کی گواہی لے لیں
کہ بغیر آپ کے آنکھوں ہی میں دم رہتا ہے

کھڑکیوں سے تو چراغاں ہے عمارت لیکن
اس کے تہ خانوں کی تاریکی میں غم رہتا ہے

کم نصیبی جو نہیں ہے تو بھلا یہ کیا ہے
دوستوں کو بھی عداوت کا بھرم رہتا ہے

غزل

بارشِ سنگ ہے کہ محفل ہے
آئینہ ہے کہ یہ مرا دل ہے

آپ کا اس میں کچھ قصور نہیں
میری فطرت میں رنج شامل ہے

تجھ سے ممکن ہے صلح بھی لیکن
خود سے سمجھوتہ پھر بھی مشکل ہے

پھر محبت کی بات کرتے ہو
بھول بیٹھے کہ یہ وہی دل ہے

ہاتھ کو ہاتھ تک نہیں دِکھتا
دور دریا سے کتنا ساحل ہے

نہ سہی راستہ ترا لیکن
جانتے ہیں کہ تو ہی منزل ہے

اُس سے پوچھا خیالؔ نے رستہ
یہ نہ سمجھا کہ بت مقابل ہے

غزل

ہم نے جب بھی تمہارا نام لیا
ضبط سے خوب دل نے کام لیا

آہ نکلی کسی کے لب سے کہیں
ہم نے کیوں دل کو اپنے تھام لیا

درد مدھم ہے، حال بہتر ہے
ہم نے ہاتھوں میں جب سے جام لیا

کیا بتاؤں کہ میری آنکھوں نے
ان کی نظروں سے کیا پیام لیا

ہم تو فرقت میں مر گئے ہوتے
درد نے بڑھ کے دل کو تھام لیا

حُسن کی شمع بجھ گئی آخر
وقت نے کیسا انتقام لیا

منتظر اب نہیں ہے کوئی خیال
ڈھونڈ میں نے ہر اک مقام لیا

غزل

تیرے پیمانوں میں بھی قحط مروت ساقی
اب ہے اٹھ جانے کی دنیا سے طبیعت ساقی

تو اگر زہر بھی دے دے تو میں پی جاؤنگا
جان بھی لینے کی ہے تجھ کو اجازت ساقی

سایۂ زلفِ پریشاں میں کہیں گم ہوئی شمع
ورنہ مے خانے میں اس وقت یہ ظلمت ساقی

نامہ بر نام سے میخانے کے کتراتا ہے
کیسے پہنچائیں تجھے اپنی عبارت ساقی

شمع لڑتی ہے ہواؤں سے بھی جلنے کے لئے
لَو کی کرتے ہیں وفا والے حفاظت ساقی

یہ کرم آخری کر دے کہ تو ناصح مت بن
بخدا کرتے رہے ہیں تری عزت ساقی

نکل آتے یہ خیالؔ اشک کی صورت اِک دن
نہ کیا ہوتا اگر ضبطِ محبت ساقی

غزل

اب زندگی میں کوئی فسانہ نیا نہیں
دلبر کی دلبری میں مگر کیا نیا نہیں

دستک نہیں کسی کی، ہوا کا فریب ہے
برسوں یہاں تو کوئی بھی آیا نیا نہیں

چہرے نئے ہیں پھر بھی اداکاریاں وہی
پردے نئے ہیں صرف، تماشہ نیا نہیں

اعلانِ صبحِ نو تو ہر اک شاہ نے کیا
آیا جہاں میں پھر بھی زمانہ نیا نہیں

شاید تمہارے ہاتھ پہ ہو زخم یہ نیا
پہلو میں یوں گلاب کے کانٹا نیا نہیں

میت پہ میری آئے ہیں وہ اس خیال سے
نکلے گا روز اس کا جنازہ نیا نہیں

غزل

دل کے ویرانے میں کچھ دیر کو یاد آئی ہے
میری قسمت کا جو حاصل ہے وہ تنہائی ہے

جو نہ چھٹتی ہے نہ کھل کر ہی برستی ہے کبھی
دل پر اِک ایسی اداسی کی گھٹا چھائی ہے

خواب سوئے ہوئے پھر سے نہ کہیں چیخ اُٹھیں
بعد برسوں کے شب غم ہمیں نیند آئی ہے

ان کے دامن پہ بھی اتریگی ستارے بن کر
میری پلکوں پہ جو یہ شام اتر آئی ہے

یاد اور خواب میں کچھ فرق نہیں ہے شاید
خواب بن بن کے ہمیں نیند میں یاد آئی ہے

اب نہیں قوتِ پرواز وہ پہلی سی خیالؔ
یاد بھٹکی ہوئی خوشبو کی طرح آئی ہے

غزل

ہائے کس ناز سے وہ اپنا پتہ دیتے ہیں
بے سبب کیوں بجھے شعلوں کو ہوا دیتے ہیں

بننے لگتی ہے کوئی بات جو بنتے بنتے
مسکرا کر وہ کوئی بات بنا دیتے ہیں

غیر حاضر تھا تو انعام دیئے جانے تھے
آج میں ہوں تو مجھے لوگ سزا دیتے ہیں

اب بھی کی جاتی ہے محسوس تہوں میں حرکت
ہم جو ماضی کے سرابوں کو صدا دیتے ہیں

ہم غریب اس کے سوا اور تجھے کیا دیتے
سائیاں ہم ترے سائے کو دعا دیتے ہیں

کانپ اٹھتا ہے مرا دل، وہ کبھی جب ایسے
ریت پر لکھ کے کوئی نام مٹا دیتے ہیں

غزل

شاید کبھی نہ پاؤ مجھے بے حجاب تم
جب تک اتار آؤ نہ اپنا نقاب تم

اچھائی کیوں نہ دیکھیں جو یہ فیصلہ کریں
کتنے خراب ہم ہیں کہ کتنے خراب تم

پہلوئے حسن میں مجھے کوئی جگہ ملے
کانٹا ہی بن رہوں میں اگر ہو گلاب تم

میں ہوں تمہارا، صرف تمہارا ہی ہوں مگر
میرے سوال کا بھی تو کچھ دو جواب تم

میں تو خیالِ یار میں صحرا نورد ہوں
کس کی تلاش میں ہو مگر اے سراب تم

مندر میں بیٹھے بیٹھے بھی جو تے پہ دھیان ہو
اتنا، خدا نہ کرنا مجھے کامیاب تم

دھبّوں میں آنسوؤں کے ہی کھو جاؤ گے خیالؔ
کھولو گے جب کبھی یہ پرانی کتاب تم

شامِ فرقت میں وہ پیتے ہیں ضرورت سے سوا
کہ کہیں ہوش نہ آجائے کبھی رات گئے

ہم تو پیتے ہیں خوشی میں بھی طبیعت سے شراب
کہ نہ بن جائے کہیں درد، خوشی رات گئے

اب نہ وہ عمر نہ وہ ساتھ نہ وہ دورِ سبو
یاد خوب آتے ہو اے دوست ابھی رات گئے

کیا کہا یاد تمھاری کہ بھلا دی میں نے
بولو خورشید بھی دیکھا ہے کبھی رات گئے

گنگناؤ گے یہ اشعار مرے تم بھی کبھی
سوچتا ہوں کئی راتوں سے یہی رات گئے

یاد آئے ہیں مجھے آپ کی محفل میں رقیب
چاند بادل میں گھرا ہے جو کبھی رات گئے

سارے دن ان کے خیالات بھی آئے نہ ہمیں
یہ خیال آیا ہے ہم کو تو ابھی رات گئے

رات گئے

بیٹھے رہنا کہیں خلوت میں کبھی رات گئے
ڈھونڈنا ان کو ستاروں میں یونہی رات گئے

یہ جو شبنم ہے ستاروں کی طرح سبزے پر
چاند ہی رویا ہے یہ اشک ابھی رات گئے

اِن اُجالوں کے حوالوں سے نہ ڈھونڈو مجھ کو
مجھے پاؤگے تو پاؤگے کبھی رات گئے

چاندنی بن کے سرِ شام جو برسی تھی ابھی
میری باہوں میں سمٹ آئی وہی رات گئے

گر کے پانی پہ کرن چاند کی بجلی سی ہوئی
کانپتا جسمِ سمندر ہے ابھی رات گئے

رشتے آنسو کے نہ جوڑو کہ مسافر ہوں میں ایک
میں چلا جاؤں گا چپ کے سے کبھی رات گئے

اب یہ عالم ہے کہ نیندوں میں مری خواب نہیں
خواب آئے جو اگر نیند گئی رات گئے

نذرِ ٹونک

جب سے وہ پیارا نگر چھوڑ دیا ہے میں نے
تب سے لگتا ہے کہ گھر چھوڑ دیا ہے میں نے
اُس کی یادوں سے ہی وابستہ ہیں یہ آنسو مرے
اِس لیے آنکھوں کو تر چھوڑ دیا ہے میں نے

رات گئے

اچھا نہ لگے گا۔ من میں یہ بات بھی ضرور رہی ہوگی کہ عام فہم الفاظ میں ہونے کی وجہ سے ہندی کے حلقوں میں یہ غزلیں آسانی سے سمجھی اور پسند کی جائیں گی۔

بہرحال امید کرتا ہوں کہ ہندی اور اُردو دونوں ہی زبانوں کے حلقوں میں کچھ کچھ لوگوں کو یہ "بائی لنگوَل" سوغات پسند آئے گی۔ دونوں زبانوں اور دونوں زبان کی لپیوں کو ایک دوسرے کے قریب لانے کی یہ کوشش، اِس طرح کی اور کوششوں کے لیے شاید ایک نئی راہ بنائے، اور شاید یہ کتاب اُن لوگوں کو بھی کام کی لگے جو اُردو رسم الخط سیکھنے کی کوشش میں لگے ہیں۔

تو لیجیے، "رات گئے" آپ کے سامنے ہے اور میں آپ کی رائے جاننے کا منتظر۔

خیالؔ

(پریہ درشی ٹھاکر خیالؔ)

وجے دشمی — ۱۹۸۸

ٹبر کی کوٹھی

سول لائنس — اجمیر

ممکن ہے کہ زیادہ روایت پسند اور تکنیک کی باریکی میں یقین رکھنے والے اُردو والوں کو میری غزلوں میں کئی خامیاں ملیں اس لیے میرا صاف بیان کر دینا مناسب ہوگا کہ اُردو شاعری کی عام روایت کے خلاف میں کسی اُستاد سے باقاعدہ اصلاح نہیں لینا یہ میرا اپنا فیصلہ ہے اور میرے اشعار میں زبان اور فن کی تمام غلطیاں میری مانی جائیں۔

غزلوں کے بارے میں بس اتنا ہی، کیوں کہ اُن کے مُنہ میں اپنی زبان بھی ہے۔

ہاں چلتے چلتے دو لفظ اس مجموعے کے "فارمیٹ" کے بارے میں — میں نے اُردو کا زیادہ تر کلام دیوناگری میں شائع جلدوں میں ہی پڑھا ہے۔ اس لیے جانتا ہوں کہ میری طرح کے لاکھوں لوگ ہیں جنھیں اُردو شاعری کا بے انتہا ذوق ہے، لیکن اُنھیں اُردو رسم الخط پڑھنا نہیں آتا۔ کہ کوئی بھی اُردو شاعری کی کتاب جب اردو رسم الخط کے علاوہ دیوناگری میں بھی چھپتی ہے تو یہ سب لوگ بھی اُس کے پڑھنے والوں کی تعداد میں شامل ہو سکتے ہیں۔ اسی لیے میں نے سوچا کہ کیا ہی اچھا ہو اگر ایک ہی جلد میں دونوں لپیوں اور زبانوں کے پڑھنے والوں تک پہنچ سکنے کی قوت ہو۔ شاید مجھے یہ بھی خیال رہا ہوگا کہ ابتدائی طور پر، میں ہندی کا کوی رہا ہوں۔ میری پہلی کتاب "ٹوٹا ہوا پل"، کویتائیں، "پراگ پرکاشن" ۸۲) بھی ہندی دیوناگری میں چھپی تھی۔ اب صرف اردو رسم الخط میں چھپا مجموعہ

اِس مجموعے کا مسودہ تیار کرنے اور اسے ترتیب دینے میں بھائی راشد ٹونکی بھائی عابد عاقل، جناب قمر صاحب، پاریکھ صاحب، میرے پرکاشک (ناشر) شری ایم۔ سی۔ گپتا اور انل کمار نے میری بے انتہا مدد کی ہے یہاں ان کا خاص ذکر اور شکریہ نہ کروں تو یہ ایک ناانصافی ہوگی۔ تہ دل سے شکریہ بھائی رام جیسوال کا بھی کرنا ہے۔ جنھوں نے اتنا خوبصورت جیکٹ ڈزائن دے کر اس کتاب کو چار چاند لگائے ہیں۔

اپنی ان غزلوں کے بارے میں مجھے صرف دو باتیں کہنی ہیں۔ پہلی تو یہ کہ یہ پہلے سے طے شدہ کسی مقصد کو ذہن میں رکھ کر نہیں لکھی گئی ہیں۔ معاشرے کو سُدھارنے یا ظلم کرنے والوں پر لعنت بھیجنے یا انتظامیہ اور سیاسی حلقوں پر طنز کرنے یا کسی کو نصیحت کرنے جیسا کوئی تقاضہ میرے سامنے کبھی نہ رہا۔ یہ غزلیں میرے اِرد گرد کے ماحول سے مخاطب میرا انفرادی "ریسپانس" ہیں۔ میرے مضامین انٹر پرسنل ریلیشن شپس کے کسی نہ کسی پہلو سے وابستہ ہیں اور ان رشتوں کی مختلف اور متواتر بدلتی ہوئی شکلیں پہچاننے اور انھیں "انٹرپریٹ" کرنے کی ایک کوشش۔ ہاں بعض شعروں میں خالص "ٹریڈیشنل" شاعری کا تغزل بھی ضرور مل سکتا ہے۔

دوسری بات یہ کہ میں نے اردو کی باقاعدہ تعلیم کبھی حاصل نہیں کی۔ یا یوں کہوں کہ چاہتے رہنے کے باوجود نہیں کر پایا ہوں۔ اس لیے زبان پر پکڑ اور "واکیبلری" بہت کمزور ہیں۔ نتیجتاً بول چال کی عام فہم زبان میں لکھنا میری مجبوری ہے (حالانکہ کبھی کبھی لگتا ہے کہ یہ مجبوری ایک طاقت بھی ہو سکتی ہے) بہت

ٹونک چھوڑنے کے بعد میں کئی برسوں تک ۔۔ قریب قریب بالکل خاموش

ہو بیٹھا ۔ یہ خاموشی پھر توڑی تو ٹونک نے ہی توڑی ۔ جولائی ۱۹۸۷ء میں اجمیر ڈویژن کا

ڈویژنل کمشنر مقرر ہونے پر ایک بار پھر ٹونک آنے جانے کا، قیام کرنے کا سلسلہ جاری

ہوا ۔ پرانے تعلقات کی جھاڑ پونچھ ہوئی، نشستیں منعقد ہوئیں اور ادبی ذوق میں گویا نئی جان

پڑی ۔ اجمیر میں بھی فضل المتین صاحب، مرحوم سرت اجمیری صاحب، مونس صاحب

سریندر چتر ویدی صاحب، انل لوڈھا صاحب جیسے منجھے ہوئے ادیبوں کا ساتھ ملا ۔

لکھنے کا سلسلہ پھر چل نکلا ۔ لیکن یہ سلسلہ بھی غالباً رنگ نہ لاتا اگر اسے میرے گھر کے

لوگوں اور کچھ ذاتی دوستوں کی بھرپور داد اور "اڈمریشن" نہ ملی ہوتی ۔ میں بہت مشکور ہوں اپنے بڑے

بھائی پروفیسر مدھوسودن ٹھاکر کا، ماما دھیریندر مشر کا، چیرمین صاحب اور نرملا جی جی کا

و ملا جی کا، ننو جی اور لیلا کا ڈاکٹر پی ۔ این شرما، ڈاکٹر پی ۔ پرشاد، ڈاکٹر آتما رام گرگ اور ڈاکٹر

پی ۔ این ماتھر کا، اشوک پانڈے، انند بھوشن ابرول، پریم چند ڈک، چندر سنگھ جی اور

راشد میاں، تی تی اور کیدار جی کا اور ان تمام دوستوں کا جنھوں نے میرا کلام بار بار اور

با ذوق سنا اور میرا حوصلہ بنائے رکھا اور سب سے زیادہ مشکور ہوں میں اپنی شریکِ حیات

ریکھا، بیٹی جیا اور بیٹے بھوون کا، جب بھی میں کوئی نیا شعر کہتا ہوں تو سب سے پہلے ریکھا

کو سناتا ہوں کیوں کہ وہ نہ صرف میری "اڈمائرر" ہیں بلکہ میری "کریٹک" بھی اور شعر سمجھنے کی

اُن کی صلاحیتیں ایسی ہیں کہ سنتے ہی بتا دیتی ہیں کہ آیا شعر دوڑیگا یا فقط چلے گا یا کہ شعر لنگڑاتا ہے

بچوں کا شکریہ یوں کہ کلام بڑوں کی سنجیدگی سے سُن لیتے ہیں اور کوئی سوال نہیں کرتے ۔

بعد وہیں ان کا انتقال ہوگیا۔

غزلوں کی اپنی اس پہلی کتاب کا عنوان اسی لیے میں نے اُس غزل سے لیا ہے جو میں نے بسملؔ صاحب کے کہنے پر لکھی تھی اور جو انھیں بہت پسند تھی کیوں کہ انھوں نے ہی مجھے ذوقِ تغزل کا انعام دیا تھا۔ آج اس موقع پر میں اپنا پہلا سلام انھیں کی قابلِ تعظیم شخصیت کو پیش کرتا ہوں۔

ٹونک' میں کوئی سوا برس رہا۔ اسی عرصے میں ٹونک اور ٹونک کے باہر دونوں کے کئی ایک اُردو داں اور شاعروں کا نیاز حاصل ہوا۔ ان میں سے کئی دوست بھی بن گیے۔ ان کا ذکر بھی یہاں اس لیے ضروری ہے کہ ان لوگوں کی داد اور حوصلہ افزائی کی بنا پر ہی غزل میں میری دلچسپیاں برقرار رہ پائیں اور یہ مجموعہ منظرِ عام پر آپایا۔ محترم خنداںؔ صاحب، بھائی بزمیؔ صاحب، مخمورؔ صاحب، شمشیرؔ خاں صاحب، راشدؔ صاحب، عاقلؔ صاحب عثمانیؔ صاحب اور شوکتؔ علی خاں صاحب کے نام قابلِ ذکر ہیں۔ ویسے تو اس سلسلہ میں ٹونک کے اتنے لوگوں کا مشکور ہوں کہ سب کے نام گنا سکنا بھی مشکل ہے۔ ٹونک کے باہر کے لوگوں میں (جن سے ملاقات کی ابتداء ٹونک رہنے کے دوران ہوئی) بھائی وسیمؔ بریلوی صاحب اور راہیؔ شہابی صاحب سے بے انتہا محبت ملتی رہی ہے۔ وسیم صاحب نے تو کئی محفلوں میں میری معمولی صلاحیتوں کو بھی غیر معمولی قرار دے کر نہ صرف ذرہ نوازی کی ہے بلکہ آگے لکھتے رہنے کی ایک مزید وجہ بھی مجھے دی ہے (تاکہ ان کا کہا آئندہ ہی سچ ہونے کی گنجائش رہے)

نہ گیا تھا۔ عمر میں قریب دگنے اور فن میں زمین آسمان کا فرق ہوتے ہوئے بھی مجھے وہ گویا اپنا دوست سمجھنے لگ گئے تھے۔ ایک دن کہنے لگے، آپ کی کوتیاںیں سن کر لگتا ہے کہ اگر آپ شعر کہیں تو بڑی آسانی سے بہت جلد ہی بہت اچھے شعر کہنے لگیں گے۔ یہ اصرار کا ان کا اپنا طریقہ تھا۔ میں تو جیسے تیار ہی بیٹھا تھا، کچھ ہی دنوں بعد میں نے "رات گئے" غزل کہی۔ بسملؔ صاحب نے سنی تو اتنے خوش ہوئے کہ ایک دم گلے سے لگا لیا۔ کہا، کچھ بھی ہو شعر کہنا نہ چھوڑیئے گا۔

اس طرح شروع ہوا اشعار اور غزلوں کا یہ سلسلہ، لیکن بہت دیر تک جاری نہ رہ سکا۔ کچھ ہی مہینوں بعد میرا تبادلہ جے پور ہو گیا۔ ابھی تک یاد ہے مجھے، ٹونک نگر پرشید میں میرا فیرویل تھا۔ بسملؔ صاحب سے لوگوں نے کہا کہ وہ بھی کچھ بولیں۔ انھوں نے صرف دو شعر پڑھے ؂

جُدا ہو کر وہ مجھ سے جا رہا ہے
محبت کا زمانہ آ رہا ہے
خیالِ ہجر دِل پر چھا رہا ہے
وہ بیٹھا ہے مگر یاد آ رہا ہے

اور بے ساختہ رو پڑے۔ اس درجہ کہ فنکشن ختم ہونے کے پہلے ہی شوکتؔ میاں کو انھیں سہارا دے کر لے جانا پڑا۔ اس کے بعد بسملؔ صاحب سے ملاقات نہ ہو سکی۔ کوئی مہینے بھر بعد ہی وہ بھی ٹونک چھوڑ کر واپس دہلی چلے گئے۔ قریب سات، آٹھ مہینے

کو یتا سننے کی ضد پوری کرتے۔

بسمل صاحب جیسا حساس اور وسیع النظر انسان اور ادیب میں نے نہیں دیکھا اب تک۔ کویتا اور شاعری کی "یونیورسل اپیل" کے حامی تھے وہ۔ جیسا اکثر اردو دانوں اور غزل کے شاعروں کے ساتھ ہوتا ہے، وہ ہندی کویتا کی ابتداء سے پہلے ہی اپنا ذہن بند نہ ہونے دیتے۔ بلکہ کوئی الفاظ اگر ایسے بھی ہوتے کہ جو ان کے لیے نئے ہوتے، تو روک کر ان کا مفہوم پوچھتے، پھر مکرر ارشاد کہہ کر آنکھیں موند اُن سطروں کو بڑے دھیان سے دوبارہ سنتے۔ اپنی شاعری میں بحر اور موزونیت کی پابندی کے باوجود ہندی کی بے بحر اور نثر نما کویتائیں بڑے ذوق سے سنتے، اور جب کسی بند یا خیال سے متاثر ہوتے تو ان کی اچانک آنکھیں بھر آتیں اور گلا روندھ جاتا۔ پھر بھی داد کی مقدار اور جوش و خروش میں کمی نہ آتی ایک دم زور سے آہ ہا ہا ہا! کر اٹھتے۔ جس محبت اور خلوص سے وہ ہندی کی کویتائیں سنتے تھے وہ "سیکولرزم" کے بارے میں ہزار تقریروں پر بھاری ہوتی۔ شیشے کی طرح صاف جھلکتا تھا کہ بسمل اپنے خُدا کا وہ نیک بندہ ہے جسے کسی اور بندے کے بھگوان کی حقیقت سے کوئی گریز نہیں۔ کسی مذہبی تصادم، کسی فرقہ پرستی کا کوئی حصہ وہ ہو ہی نہیں سکتا۔ اب بھی کبھی بسمل صاحب کی انسانی محبت کی وسعت کے بارے میں سوچتا ہوں تو دل عقیدت سے بھر اٹھتا ہے۔

اتنے بڑے شاعر ہونے پر بھی غرور تو بسمل صاحب کو جیسے چھو تک

جہاں اردو کے کئی بہترین اور استاد شاعروں سے ان کا کلام انہی کی زبانی سُن سکتا تھا۔ ٹونک میں شعری نشستیں آئے دن ہوتی رہتی تھیں اور اپنی دلچسپیوں کی وجہ سے میں ان میں اکثر شریک ہُوا کیا۔

اسی بیچ صاحبزادہ شوکت علی خاں (جو، اب ٹونک کے عربی، فارسی ریسرچ ادارے کے ڈائرکٹر ہیں) اور ڈاکٹر سعید کی معرفت میر التعارف اُردو کے مشہور شاعر مرحوم بسمل سعیدی صاحب سے ہوا۔ بسمل صاحب سے تو جیسے پچھلے کسی جنم کا ناطہ رہا ہو —— کچھ ہی دنوں میں ایسی انسیت ہوگئی جیسے برسوں کے واقف ہوں۔ نہ عمروں کے فرق سے کوئی فرق، نہ کسی اور قسم کی کوئی جھجک اکثر شام کو شوکت میاں کے ساتھ میرے گھر آجاتے۔ آتے ہی اپنا ایک مطلع پڑھ کے خود کو اور مجھے ایک ساتھ مخصوص کر دیتے۔ کہتے کلکٹر صاحب!

ہر بزم کے افسانے نہیں ہیں ہم لوگ
ہر شمع کے پروانے نہیں ہیں ہم لوگ

پھر ہنس پڑتے۔ گھنٹوں ہم ان کی محبت بھری شخصیت کے نور اور باتوں کے رس میں ڈوبے بیٹھے رہتے۔ دنیا بھر کی باتیں ہوتیں۔ بسمل صاحب کبھی نواب صاحب کے زمانے میں پڑھے گیے کسی مشاعرے کا ذکر کرتے تو کبھی جوشؔ اور کنور صاحب کے ساتھ گذاری گئی کسی شام کا۔ کبھی اسی دن کے کہے ٹٹکے (تازہ) اشعار پڑھتے تو کبھی کوئی بہت پرانی چیز —— اور ہر ملاقات میں مجھ سے ایک نہ ایک کوئی

مجھے لگتا ہے کہ ٹونک کی سرزمین اور آب و ہوا میں شاعری کی غذا ایک پُراسرار طریقے سے رچی بسی ہوئی ہے۔

غالباً یہی وجہ ہے کہ اس ایک چھوٹے سے شہر نے اختؔر شیرانی، بسملؔ سعیدی جیسے نامی گرامی شاعر پیدا کیے۔ اردو شاعری کی "ٹریڈیشنس" یہاں اتنی زبردست ہیں کہ کہتے ہیں ٹونک میں ہر تین شخصوں میں ایک شاعر ہوتا ہے اور میں سمجھتا ہوں کہ باقی بچے ہوئے دو بھی ایسے ڈوب کر سننے اور سمجھنے والے، داد دینے والے سامعین ہوتے ہیں جن کے بغیر بھی شاعری پروان نہیں چڑھتی۔ بناس ندی کی وادی میں بسے اس شہر کے لوگوں کی زبان اتنی ہی شیریں ہے جتنے بناس کی ریت پر اگائے جانے والے یہاں کے خربوزے۔

پہلے پہل میں یہ نہ جان پایا کہ یہاں کا ماحول میرے قلم کو ایک نیا موڑ ایک نئی زباں دے دے گا اور میں اپنی آزاد نظموں کی آزادی چھوڑ کر اپنی رضا سے غزل کی سریلی بحروں میں اسیر ہو جاؤں گا۔ دراصل اس نسبت کے پہلے کچھ مہینوں میں، میں پہلے ہی کی طرح ہندی کویتائیں ہی لکھتا رہا۔ لیکن دوسری طرف ایک نئی شروعات بھی ہو رہی تھی۔ کالج کے زمانے سے ہی میرؔ، غالبؔ، مومنؔ، ذوقؔ ظفرؔ، جوشؔ ساحرؔ اور مجازؔ وغیرہ کے کلاموں کے دیوناگری سنسکرن (بھلا ہو مرحوم پرکاش پنڈت جی کا) پڑھتا رہا تھا اور اردو زبان کی مٹھاس اور غزل کے رنگ و آہنگ اور رومانیت سے متاثر بھی تھا۔ اب پہلی بار ایک ایسے شہر میں تھا

پس منظر

ذکرِ ٹونک / یادِ بسمل / آغازِ غزل

سنہ ۶۵ کے آس پاس سے میں ہندی میں کویتائیں اور آزاد نظمیں لکھتا رہا تھا، لیکن سنہ ۷۰ کے بعد یہ سلسلہ کئی مصروفیات کی وجہ سے مدھم پڑ گیا، بلکہ یوں کہیں کہ بند جیسا ہی ہو گیا۔ 1975 میں کچھ دوستوں کے اصرار پر کچھ کویتائیں رسالوں میں بھیجیں اور پہلی بار بھیجی گئیں کویتاؤں میں سے ایک کویتا "او پانچ ورکشو" بھائی دھرم ویر بھارتی نے "دھرم یگ" میں شائع کی۔ اگلے ایک برس میں "دھرم یگ" "رَوِوار" اور راجستھان ساہتیہ اکادمی کے رسالے "مدھومتی" میں میری کئی اور کویتائیں چھپیں۔ جن لوگوں نے پڑھیں، اُن میں سے کچھ نے خط لکھے کئی نے چرچا کی، دوستوں اور شبھ چنتکوں نے حوصلہ افزائی کی اور آگے لکھتے رہنے کی صلاح دی، تو لکھنے کا سلسلہ پھر سے شروع ہو گیا۔ پہلی بار مجھے یہ احساس ہوا کہ میرے کلام کے پس منظر اور مضامین چاہے کتنے ہی ذاتی قسم کے کیوں نہ ہوں اس میں سے کافی کچھ ایسا بھی ہو سکتا ہے جو اوروں کو بھی اچھا اور پڑھنے لائق لگے اور اگر ایسا ہے تو وہ منظرِ عام پر لائے جانے کا مستحق ہے۔

انہی دنوں ستمبر ۷۵ میں میری پوسٹنگ بطور ضلع کلکٹر، ٹونک میں ہو گئی۔

میری الجھن سے، مرے ساتھ الجھنے والا

کوئی تو ہوتا مری بات سمجھنے والا

وہ خفا ہے تو رہے، اتنا بتا دے مجھ کو ؛ میرے آنے کی خبر پا کے سنورنا کیوں ہے

ایک سایہ بھی درختوں کا نہ راہوں میں بچا

کہ جو تھک جائے مسافر تو ٹھہر جائے کہیں

ہر دل عزیز شخص کی قسمت تو دیکھیے

ایسا ہوا وہ سب کا کسی کا نہ ہو سکا

ایسے ایسے کتنے ہی شعر ہیں جو آپ اگلے صفحات میں پڑھیں گے۔ میں یہاں کیوں نقل کروں۔!

خیال صاحب ابتداء میں ہندی میں لکھتے تھے — آزاد نظمیں۔ غزل کی طرف اور اردو کی طرف بھی وہ بعد میں متوجہ ہوئے، میرے نزدیک یہ ہم عصر اردو شاعری کے لیے ایک نیک شگون تھا کہ ان جیسا تازہ کار شاعر ادھر آیا۔ میں ان کی غزلوں کے اس اوّلین مجموعے کا جو بہ یک وقت دیوناگری اور اردو رسم الخط میں شائع ہو رہا ہے، پرتپاک خیر مقدم کرتا ہوں اور امید کرتا ہوں کہ اسے قبولِ عام حاصل ہو گا۔

محمود سعیدی

(مخمور سعیدی)

دہلی — ۱۹ر نومبر ۱۹۸۸ء

ایک شخصیت کا دوسری شخصیت سے تعارف ہو یا تصادم، دونوں صورتیں کچھ رشتوں کو جنم دینے کا سبب بن جاتی ہیں۔ یہ رشتے پائیدار بھی ہو سکتے ہیں اور ناپائیدار بھی، لیکن ایک حساس انسان کا ان سے متاثر ہونا لازمی ہے۔ وہ ان رشتوں کی ماہیت جاننا چاہیگا، یہ سمجھنا چاہے گا کہ اسکی نجی زندگی میں بھی اور سماجی زندگی میں بھی ان کی کیا جگہ ہے؟ یہ اس کی ذات سے ہم آہنگ ہیں یا متصادم؟ اگر ہم آہنگ ہیں تو کیوں اور متصادم ہیں تو کیوں؟ یہی وہ کاوشیں اور خلشیں ہیں جو ایک حساس آدمی کو اکثر صورتوں میں شاعر بنا دیا کرتی ہیں۔ خیالؔ صاحب نے جہاں فطرت کے ساتھ اپنے تعلق کو سمجھنے کی کوشش کی ہے وہیں انسانی رشتوں کو بھی انھوں نے اپنی نظر اور اپنی فکر کا محور بنائے رکھا ہے۔ فطرت کے ساتھ ان کے گہرے تعلق خاطر نے ان کے کلام میں کچھ ماورائی کیفیتوں کو جنم دیا ہے تو انسانی رشتوں سے عمیق دلچسپی نے ان کے فکر و تخیل کی اڑانوں کو زمین کے ساتھ ایک اٹوٹ بندھن میں باندھے رکھا ہے۔ مجھے اپنا ایک شعر یاد آتا ہے:

بلندیوں کے سفر میں زمیں سے دور نہ جا
زمیں نہ زیرِ قدم ہو تو آسماں کیا ہے

خیالؔ صاحب کے فکر و تخیل کی اڑانیں بلاشبہ آسماں پیما ہیں، مگر ان کے قدم زمین پر مضبوطی سے جمے ہوئے ہیں، یہی وجہ ہے کہ ان کی شاعری میں ہمیں اپنے اردگرد پھیلی ہوئی سوتی جاگتی زندگی کی متحرک تصویریں نظر آتی ہیں اور ہمارے ذہن و دل میں ایک مستقل جگہ بنا لیتی ہیں۔

جو شاعر ایسے شعر کہنے پر قادر ہو اُسے کون سر آنکھوں پر جگہ نہ دیگا۔

دکھ ہوا ہوگا تمھیں بھی تو اسے دیکھ کے اب ؛؛ میری آنکھوں میں جو یہ چپ سی سمجھداری ہے

میرے نزدیک شعر، شاعر کی ذہنی اور جذباتی سوانح عمری ہے۔ خارج کی زندگی میں وہ اپنے اردگرد جو کچھ دیکھ رہا ہے اور اس کے ان مشاہدات کے جو تاثراتی نقش اس کے باطن میں مرتسم ہو رہے ہیں، انھیں لفظوں کی گرفت میں لے لینا ہی شاعر کا اصل فن اور اسکی فنکاری کی صحیح پہچان ہے۔ اس کے یہ تاثرات جتنے نازک اور لطیف ہوں گے انھیں معرضِ اظہار میں لانے کے لیے اتنے ہی نازک اور لطیف الفاظ کا انتخاب شاعر کا فریضہ ہے، اور اس فریضے کی ادائیگی میں خود اس کا فنی شعور اور اس کی داخلی کیفیات اس کی رہنما بن جاتی ہیں۔

خیاؔل صاحب کی شخصیت میں ایک گداز ہے، اندر ہی اندر جذبے اور احساس کی تمازت سے پگھلتے رہنے کی ایک کیفیت ـــــ مظاہر فطرت میں سورج، چاند، ستارے اور پیڑ انھیں بطورِ خاص اپنی طرف متوجہ کرتے ہیں۔ ان میں غالباً وہ اپنے باطن کا عکس دیکھتے ہیں۔ اسے یوں بھی کہا جا سکتا ہے کہ یہ مظاہرِ فطرت انکی شخصیت کے آئینے میں اس طرح منعکس ہوئے ہیں کہ خود ان کے وجود کا حصّہ بن گئے ہیں۔ ان کے اشعار میں طلوع ہوتے ہوئے آفتاب کی شعاعوں کی سی جو خوشگوار تمازت ہے، آدھی رات کے چاند کی کرنوں جیسی جو شبنمیں ٹھنڈک ہے، اندھیرے آسمان میں جگ مگ جگ مگ کرتے ستاروں کی روشنی کی طرح نور پاشی کا جو انسانی جذبہ ہے اور گھنے پیڑوں کی طرح جلتے راستوں پر سائے پھیلا دینے کی جو معصومانہ خواہش بار بار سامنے آتی ہے، وہ سب ان کی شاعرانہ شخصیت کی مختلف جہات ہیں جس کی انھوں نے بڑی سچائی اور خلوص کے ساتھ اپنے جسم و جان میں پرورش کی ہے۔

رات گئے/۱۰

مقدمہ

جناب پریہ درشی بھٹا کر خیالؔ سے میرا تعارف لگ بھگ تیرہ[۱۳] سال پرانا ہے ۔ وہ ان دنوں ٹونک میں ضلع کلکٹر کے منصب پر فائز تھے میں کسی نجی ضرورت سے یا شاید کسی مشاعرے میں شرکت کے لیے وہاں گیا ۔ استاد مرحوم بسملؔ صاحب بھی اُن دنوں ٹونک ہی میں مقیم تھے ۔ انھوں نے خیالؔ صاحب کی بہت تعریف کی بہ حیثیت شاعر بھی اور بطور انسان بھی ۔ میں نے اس وقت تک نہ خیالؔ صاحب کا کلام سنا تھا نہ انھیں قریب سے دیکھا تھا ۔ دل میں یہ سوچتا ہوا کہ بسملؔ صاحب نے انکی جو تعریفیں کی ہیں اُن میں غالباً خیالؔ صاحب کے ساتھ اُن کے تعلقِ خاطر کو زیادہ دخل ہوگا ، میں بسملؔ صاحب کی معیت میں ان کی خدمت میں پہنچا اور ان کی کچھ نظمیں سننے کی سعادت بھی حاصل ہوئی ۔ میں نے محسوس کیا کہ بسملؔ صاحب نے ان کے اور انکی شاعری کے بارے میں جو کچھ کہا تھا وہ مبالغے پر نہیں، سچائی پر مبنی تھا ۔

شاعری ، شاعر کی شخصیت کا پردہ بھی ہو سکتی ہے اور اُسے بے پردہ کرنے والی بھی لیکن مجھے وہی شاعری متاثر کرتی ہے جو شاعر کی شخصیت کا اظہار ہو ۔

فہرست

ماں ، ریکھا ، جیا

اور

بھُوَن کے لیے

ISBN 81-7056-049-7 ......

★ بار اوّل : ———— ۱۹۸۹ء

ناشر

پنچ شیل پرکاشن

فلم کالونی ، جے پور ۳۰۲۰۰۳

مطبع : شانتی پریس ———— وشواس نگر۔ دہلی ۳۲

RAAT GAYE

By Priyadarshi Thakur(Ghazals)

Rs. 65.00

رات گئے/۴

رات گئے

پریہ درشی ٹھاکر خیال

پنچ شیل پرکاشن ، جے پور

رات گئے



پریہ درشی ٹھاکر خیال

پیدائش ___ ۲۲ر اگست ۱۹۴۶ء

وطن مالوف ___ سنگھ واڑہ، دربھنگہ (بہار)

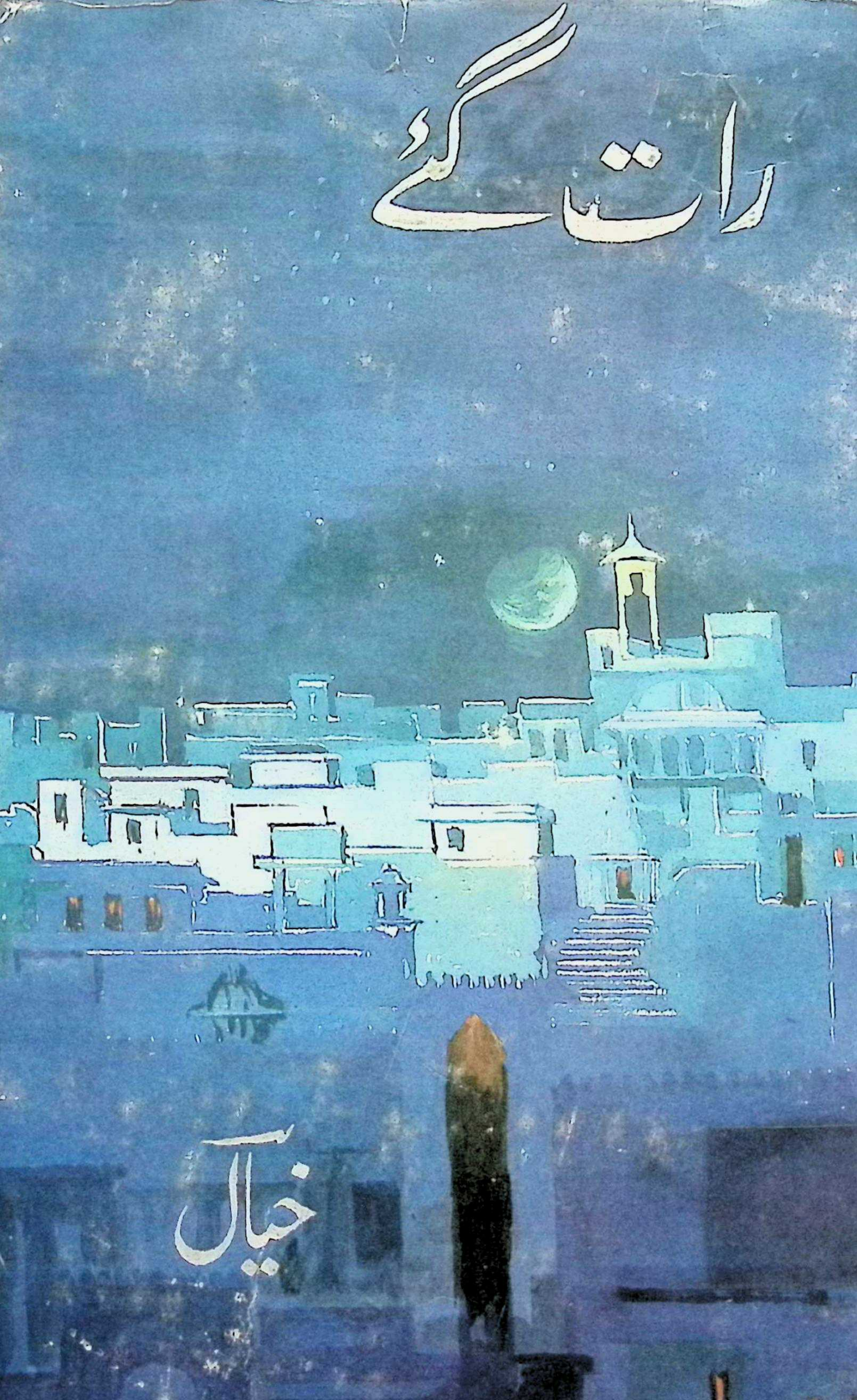
___ اب تقریباً ۱۷ سال سے راجستھان میں رہ رہے ہیں ___

تعلیم ___ ایم۔ اے (تاریخ) دلی یونیورسٹی سے ۱۹۶۷ء میں۔

۱۹۶۷ء سے ۱۹۷۰ء تک بھگت سنگھ کالج، دلی میں پڑھایا۔ ۱۹۷۰ء سے آئی۔ اے۔ ایس کے راجستھان کیڈر میں ___ آج کل اجمیر ڈویژن کے ڈویژنل کمشنر ہیں۔

___ ہندی کویتائیں اپنے نام سے لکھتے ہیں اور اردو کلام کے لیے خیال تخلص فرماتے ہیں۔ اپنی زیادہ تر غزلوں کو آپ انسانی رشتوں کی الگ الگ اور لگاتار بدلتی ہوئی شکلوں کو پہچاننے اور سمجھنے کی کوشش مانتے ہیں۔

___ "رات گئے" آپ کی غزلوں کا پہلا مجموعہ ہے ___ ہندی کویتاؤں کا مجموعہ "ٹوٹا ہوا پُل" پراگ ___ پرکاشن، دلی سے ۱۹۸۲ء میں شائع ہو چکا ہے۔


رات گئے
خیال